THE BOOK WAS DRENCHED

TEXT FLY WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_182819
UNIVERSAL
LIBRARY

H781.5085 GH.1517
M26N
मानस, जॉन एच० ।
नृत्य और स्वास्थ्य । 1957

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H781.5085 M2GN Accession No. G.H.1517

Author मानस, ऑग एच०।

Title नृत्य और स्वास्थ्य। 1957

This book should be returned on or before the date last marked below

5 FEB 1964

अमरीका के प्रख्यात दार्शनिक,
लेखक एवं विचारक
डॉ० जॉन एच० मानस

नृत्य और स्वास्थ्य

लेखक

डॉ० जॉन एच० मानस

पी-एच० डी०, डी० पिस०, इत्यादि

अनुवादक

डॉ० नरेन्द्र चौधरी, डी० लिट्०

भारती एसोसिएशन प्रकाशन

गाज़ियाबाद उत्तर प्रदेश

प्रकाशक :
(श्रीमती) रीता चौधरी
भारती एसोसिएशन पब्लिकेशन्स गाजियाबाद उ० प्र०

This Health-Series is being published in collaboration with—
PYTHAGOREAN SOCIETY
152 West 42nd St New York
and by special arrangements with the author
Dr John H. Manas

इस पुस्तक के हिन्दी प्रकाशन के सर्वाधिकार भारती एसोसिएशन पब्लिकेशन्स को ही प्राप्त है।

मूल्य : डेढ़ रुपया
प्रथम संस्करण : १९५७

मुख्य वितरक :
राजकमल पब्लिकेशन्स लि०
८ फैज बाजार दिल्ली
पटना. इलाहाबाद. बम्बई

मुद्रक :
श्री गोपीनाथ सेठ
नवीन प्रेस दिल्ली

सूची

१. नृत्य की प्राचीनता ... ५

नृत्य का मनोविज्ञान—चक्र का नियम—मानसिक ग्रन्थियों का कारण—नृत्य की उत्पत्ति—नृत्य का क्रमिक विकास।

२. प्राचीन यूनानी नृत्य ... १७

नृत्य का प्राचीन इतिहास—अन्य ऐतिहासिक प्रमाण।

३. कम्पन का नियम ... ३०

कम्पन और बनावट—यथोचित तालमय नृत्य द्वारा स्वास्थ्य-लाभ—धार्मिक पूजा-पाठ सम्बन्धी नृत्य एवं जीसस—किस समय नृत्य किया जाय—श्वास लेने की विधियाँ—सुन्दर नृत्य के लिए नियम—तालमय संगीत एवं नृत्य की जैज़ से तुलना।

परिशिष्ट ... ४६

अभ्यास शेष अन्य राष्ट्रो की अपेक्षा विशेषकर यूनानियो द्वारा किया जाता था और एथेंस-निवासियो को नृत्य से अपार प्रेम था। प्लेटो तथा सुकरात ने नृत्य के विषय मे अपनी सम्मति प्रदान की है तथा थैस्सेलियन (Tessalians) तथा लेसेडीमोनियन (Lacedaemonians) इसको ललित कलाओ में समान स्थान देते थे।

एच्चिलस (Aeschylus) नामक नाटक-जन्मदाता (५२५-४५६) ने अपने नाटको एव दु.खान्त नाटको मे नृत्य का समावेश करके नृत्य-कला की प्रगति को बहुत अधिक आगे बढाया है तथा समस्त अनुकरण की जाने योग्य कलाओ को सयुक्त करके नाट्य-भवनो की आकृतियो के प्रथम आदर्श प्रस्तुत किए। हम यह भी जानते है कि अगाथारचूस (Agatharchus) ने एथेस-निवासी नाटककार के पथ-प्रदर्शन मे सर्व-प्रथम दृश्यो के चित्र बनाये और नाटकीय भवन-निर्माण की सबसे पहले रचना की।

लूशियन पुन. हमको यह बतलाता है कि नृत्य सृष्टि का समकालीन है और इसकी उत्पत्ति उतनी ही प्राचीन है जितनी पुरातन कामदेव की। वह कहता है कि इस नक्षत्र-मण्डल की व्यवस्था तथा स्थिर नक्षत्रो के साथ ग्रहो का निरन्तर संयोग और उनकी गतियो का संगीतमय तालस्वर एव सुन्दर समन्वय नृत्य की आदिकालिक उत्पत्ति के निर्विवाद सकेतो के अतिरिक्त और क्या है? अतएव यह न्यायपूर्वक निश्चित किया जा सकता है कि नृत्य-कला उतनी ही प्राचीन है जितना प्राचीन स्वयं ससार है, जो अदृश्य रूप मे मनुष्य के अन्दर बसी है और जो अब भी धीरे-धीरे उत्कृष्ट पूर्णता की ओर बढती जा रही है, जिसने हमारे युग में कला का नाम प्राप्त कर लिया है और जो वास्तविक रूप में इस नाम की अधिकारिणी है तथा जो सबसे अधिक व्यापक क्षेत्र में और अत्यन्त परिष्कृत रूप एव समन्वय मे समस्त सगीत की देवियो (Muses) के सुन्दरतम उपहारो का अपने अन्दर समावेश करती है।

नृत्य का मनोविज्ञान

प्राचीन काल मे यूनानी नृत्य को एक ललित कला मानते थे और उसको इस रूप मे टर्प्सिकोर (Terpsichore) का पवित्र संरक्षण प्राप्त था, जोकि नाइन म्यूजिस (Nine Muses) नामक जिअस (Zeus) एवं निमोसीन (Mnemosyne) की पुत्रियो में से एक थी (Terpo) शब्द का अर्थ 'प्रसन्न होना' एवं 'Choros' शब्द का अर्थ 'नृत्य के लिए' है)। नृत्य मानव-जीवन की तीन प्राथमिक अभिव्यक्तियो में से एक है, शेष दो वाणी एवं संगीत है।

व्यक्त एवं विचारपूर्ण भाषण तथा सगीत के बिना मनुष्य इस चेतन स्वरूप में इस पृथ्वी पर स्थित नही रह सकता था, और न कोई सभ्यता ही रहती। तब मानव पशु होता। वाणी का सम्बन्ध मनुष्य की मानसिक अथवा विचार-शक्ति से है और सगीत का सम्बन्ध उसके मनोवेगो से है। इस कारण जो मनुष्य विचार-शक्ति से वचित है और जिसकी भावनाओ को दबा दिया गया है अथवा असन्तुलित है, वह बोलने में असमर्थ है और संगीत के भी अयोग्य है। वह मनुष्य सामान्य मानवी विकास से नीचे है।

नृत्य का सम्बन्ध शरीर की चेतन गतियो से है और इस कारण इसकी स्थिति वाणी तथा संगीत दोनो ही से पूर्व है। तालमय स्पन्दन जीवन के सिद्धान्त की अभिव्यक्ति है। मुखाकृतियो के रूप मे, हँसने मे, हाथ-पैरो को हिलाकर, व्याकुल होकर अन्य प्राणी और मनुष्य का अन्तःकरण अथवा आत्मा स्थूल शरीर को आन्तरिक भावों को प्रकाशन के लिए अग्रसारित करके अभिव्यक्ति के लिए बाहर को ढकेलती है। बच्चो के रोने एव व्याकुल होने का यही कारण है। चलने-फिरने तथा रेगने मे बच्चा जितना अधिक स्वतन्त्र रहेगा, उसकी शारीरिक वृद्धि एव सामान्य स्वास्थ्य की रक्षा के लिए उतना ही अच्छा है।

अपने शारीरिक अगचालनो द्वारा एव हाथ-पैर तथा सिर को हिलाकर हम अपने-आपको जीवधारी व्यक्त करते है। मानव-जाति के आरम्भ काल मे ये सुषुप्त-अवस्था मे थे। उनका प्रचालन मनुष्य के अर्द्ध चैतन्य मस्तिष्क से होता था, जैसी कि आज भी बहुत सी शारीरिक क्रियाए होती रहती है। आँतो की भित्तियो मे जो गति होती है, हमारे पेट मे जो क्रियाए होती है, हमारे हृदय मे जो स्पन्दन होता है, रक्त का जो प्रवाह होता है और इसी प्रकार की जो अन्य क्रियाएं होती है, उनका हमको पता ही नही रहता। प्रारम्भ मे असम्बन्धित, विषम और अनियन्त्रित गतियो से जहाँ तक भावना, प्रयोजन तथा निश्चित परिणाम का सम्बन्ध था, मनुष्य मे धीरे-धीरे तर्क-शक्ति और मानसिक शक्ति के विकास की अभिव्यक्ति होनी आरम्भ हो गई। इन शारीरिक क्रियाओ के क्रमिक विकास ने लाखो वर्षो के पश्चात् मनुष्य एवं अन्य प्राणियो मे भेद दरशाने के हेतु प्रारम्भिक मनुष्य के वैयक्तिक मनोवेगो और मानसिक शक्ति में बहुत-कुछ विकास कर दिया।

धीरे-धीरे मनुष्य ने अनुभव से यह सीख लिया कि एक पेड को काटने के लिए उसको अपनी पत्थर की कुल्हाडी को वृक्ष के तने मे एक निश्चित शक्ति से मारना चाहिए और एक निश्चित शक्ति से एक ही स्थान पर निरन्तर चोट मारने से अपनी स्थिति के लिए आवश्यक इस कार्य को कर सकने मे समर्थ हुआ। इसी तरह से और प्रकृति के समान सिद्धान्त के पथ-प्रदर्शन मे जहाँ उसको अन्तःकरण का अनुभव हुआ, उसकी इच्छाओ और मनोवेगो की तुष्टि हुई, वह उन प्रारम्भिक भावनाओ को अपने शरीर तथा इसके सम्पूर्ण अवयवो की गतियो एवं बाह्य क्रियाओ से प्रकाशित करना सीख गया।

चक्र का नियम

दर्शन-शास्त्र हमको यह सिखाता है कि सृष्टि तथा मानव चार विभिन्न भौतिक पदार्थो अथवा तत्त्वो के योग से निर्मित है—भौतिक

जिसको प्रत्येक मनुष्य देख सकता है, आकाश सम्बन्धी, इच्छा अथवा मनोवेग सम्बन्धी तथा मानसिक—जोकि साधारण पुरुष को दृष्टिगोचर नहीं हो सकते। चक्र के नियम के अनुसार जब इनमें से किसी एक शरीर में अथवा स्तर पर कोई कारण अथवा प्रेरणा उत्पन्न की जाती है तो वह तुरन्त उससे अगले शरीर पर पहुँचा दी जाती है और यह एक कल्पित वृत्त की परिक्रमा करती है और जिस स्थान से चलनी आरम्भ होती है पुनः वहीं आ जाती है।

प्रारम्भिक मनुष्य के मस्तिष्क के अन्दर, जोकि पेड़ों को उस कन्दरा के द्वार को बन्द करने के उद्देश्य से काटता था जिसमें वह अपने परिवार के साथ रहता था, आवश्यकतावश उसकी उदयोन्मुख चेतना-शक्ति द्वारा कोई साधारण प्रारम्भिक विचार उत्पन्न हुआ। इस मानसिक प्रेरणा ने मनुष्य के चारों शरीरों के वृत्त की परिक्रमा करनी प्रारम्भ कर दी और इसने सर्वप्रथम इच्छा-शक्ति सम्बन्धी शरीर को प्रेरित किया। अब मनुष्य अपने मन में इस बात का विचार करने के साथ-साथ कि कट जाने के बाद पेड उसकी गुफा के सम्मुख कैसा प्रतीत होगा, इस कार्य में दत्तचित्त होकर लग गया और उसके अन्दर उस कार्य को पूरा करने की इच्छा उत्पन्न हो गई। यह इच्छा उसके आकाश सम्बन्धी शरीर (Etheric Body) पर स्थानान्तरित कर दी गई, जिसके द्वारा चेतना-शक्ति का सचार होता है। अब उसको इस कार्य से पूरा-पूरा प्रोत्साहन मिलने लगा और पाषाण-खण्ड की कुल्हाडी का वृक्ष के तने अथवा उसकी शाखा पर अपनी शक्तिशाली भुजाओं से प्रहार करना इस नियम की प्रक्रिया भौतिक स्तर पर अन्तिम अभिव्यक्ति हुई। भौतिक स्तर पर अपने इस कार्य की सफलता की सीमा मनुष्य के मन, इच्छा, चेतना-शक्ति और स्थूल शरीर के समन्वय पर पेड के तने पर बार-बार निश्चित स्थान पर कुल्हाडी का प्रहार करने पर निर्भर रहती है।

पेड के कट जाने पर इस मनोवैज्ञानिक नियम का आधा चक्र

समाप्त हो जाता है। मनुष्य के इस कार्य का शेष आधा चक्र उस समय समाप्त होता है जबकि वह शून्य एव इच्छा-शक्ति सम्बन्धी शरीरो को पार करता हुआ उस मानसिक स्तर अथवा मानसिक शरीर पर पुनः लौटकर आता है, जहाँ पेड को काटने की प्रेरणा सर्वप्रथम उत्पन्न हुई थी। यह प्रक्रिया निम्नलिखित विधि से सम्पादित होती है। जब वृक्ष को काटने मे सफलता प्राप्त हो जाती है तो मनुष्य को अपनी सफलता से प्रोत्साहन मिलता है और प्रारम्भिक प्रेरणा शून्य सम्बन्धी शरीर पर स्थानान्तरित कर दी जाती है। तब वह अपनी कार्यपटुता के प्रति अधिक प्रयत्नशील होने लगता है, कल्पित वृत्त की परिक्रमा करती हुई प्रेरणा उसके इच्छा सम्बन्धी शरीर तक पहुँच जाती है और अन्त मे वह अपनी सफलता की महत्ता का अनुभव करता है। प्रेरणा उसी स्थान पर लौट आती है, जहाँ से यह आरम्भ हुई थी और इस प्रकार इस नियम का चक्र समाप्त हो जाता है।

इस सफलता से मनुष्य को जो प्रसन्नता होती है, उससे एक नई प्रेरणा उत्पन्न होती है, जिससे इस प्रकार इस मनोवैज्ञानिक नियम के एक नये चक्र की प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है। ये नये विचार इच्छा तथा भावना से सम्बन्धित शरीरो की गतियो द्वारा बाह्य रूप में प्रकाशित होते हैं। मनुष्य के स्वस्थ रहने के लिए इस मनोवैज्ञानिक नियम की निरन्तर प्रक्रिया आवश्यक है। जब इस नियम के कार्य में मनुष्य अथवा उसके जीवन मे उपस्थित अनियन्त्रित अवस्थाओं तथा परिस्थितियो द्वारा कोई रुकावट उत्पन्न होती है, तब मनुष्य के अन्दर स्नायु सम्बन्धी रोग तथा अव्यवस्थित मनोवैज्ञानिक अवस्थाएँ उत्पन्न होती हैं।

सम्पूर्ण प्रकृति में यही नियम कार्य करता है। मनुष्य तथा प्रख्यात प्राकृतिक पदार्थों की परस्पर तुलना करने पर हम देखेंगे और समझेंगे कि स्नायु-जाल सम्बन्धी व्याधि की अवस्था तथा मानसिक निश्चय मनुष्य के अन्दर उत्पन्न होते हैं एव यथोचित नृत्य, संगीत अथवा

नाटक द्वारा उनका निवारण कैसे किया जा सकता है।

एक तालाब में एक कंकड फेकिये, तो जिस स्थान पर यह ककड पानी मे प्रवेश करता है, उस स्थान से बाहर की ओर को लगातार ऐसी वृत्ताकार लहरे उठती है, जिनका केन्द्र एक होता है। उनकी शक्ति तथा उनकी गति की दूरी उस ककड के भार तथा उसको फेकने मे लगाई गई शक्ति पर निर्भर करती है।

एक लोटे मे दूध भर दीजिये तथा दूध को एक डण्डे से हिलाइये तो दूध में भी चारों ओर को एक केन्द्र से उसी प्रकार की वृत्ताकार लहरें उठने लगेगी जैसी ककड को तालाब मे फेकने से उठने लगी थी। परन्तु दूध के हिलने से जो शक्ति उत्पन्न होती है, लोटे की दीवारे उसके विस्तार को रोक देती है। उस स्थान के सीमित हो जाने से, जिसमे दूध की लहरे फैलती है, जो इस नियम को आघात पहुँचता है वह इस प्रकार दूध के हिलाने वाली शक्ति को नष्ट होने से रोककर दूध की एक विषम अवस्था का रूप धारण कर लेता है। दूध के अन्दर विद्यमान घृत के कण अलग हो जाते है और वे मिलकर मक्खन नामक एक दीर्घाकार पदार्थ का रूप-धारण कर लेते है, जिसकी विभिन्न विशेषताएं होती है और दूध से विभिन्न प्रकृति का होता है।

मानसिक ग्रन्थियों का कारण

ठीक यही बात मनुष्य के साथ होती है जबकि उसके मनोवेगो अथवा विचारो को दबाकर उसके अन्दर एक मानसिक निश्चय उत्पन्न किया जाता है। वास्तव मे मनोवेग अथवा विचार मनुष्य की आत्मा द्वारा उसके मनोवेग सम्बन्धी अथवा मानसिक स्तर पर फेंकी गई इच्छा अथवा मानसिक कंकड के अतिरिक्त कुछ नही है। जब तक इन प्रेरणाओ की शक्ति तत्सम्बन्धी लहरो सहित सामान्य रूप से तथा बुद्धिमानी से शारीरिक क्रियाओ द्वारा व्यय नही की जाती अथवा

आत्मा द्वारा अन्दर-ही-अन्दर चेतना-शक्ति के रूप में परिवर्तित नही कर दी जाती, तब तक किसी मनोवेग, मानसिक निश्चय अथवा किसी ग्रन्थि का विकास नही होता। आजकल हमारे चिकित्सालय इस प्रकार के मानसिक रोगों से पीडित रोगियो से परिपूर्ण है। इन रोगों की एकमात्र चिकित्सा यह है कि रोगी की इस रुकी हुई मानसिक शक्ति को यथोचित मार्ग द्वारा प्रवाहित करके बाहर निकालना अथवा इस शक्ति को अपने लाभ और सुख के लिए जीवन-शक्ति में परिवर्तित करना सिखाकर इस मनोवैज्ञानिक नियम पर होने वाले आघात का निवारण किया जाय।

यही चक्र का मनोवैज्ञानिक नियम उस समय काम करता है जब एक बच्चे को एक सेब दिखाया जाता है। वह प्रसन्न होता है और आने वाली अच्छी वस्तु के प्रति अपनी सन्तुष्टि प्रकट करने के लिए खुशी से उछल पड़ता है। यदि सेब अच्छा हुआ तो बच्चा अधिक प्रसन्न होता है और उसकी सन्तुष्टि प्रकट करने के चिह्न उसके मुँह पर उसके हाथो तथा शरीर की गतियो से दृष्टिगोचर हो जायँगे। यदि सेब कडवा हुआ तो भौतिक शरीर मे उत्पन्न कारण शीघ्र ही इस चक्र के काल्पनिक वृत्त के चारो ओर चक्कर लगा देगा तथा तत्सम्बन्धी प्रतिक्रिया बच्चे के चेहरे की गम्भीरता मे, मुँह मे गये हुए टुकडे को मुँह से बाहर निकाल देने में और तत्सम्बन्धी हाथ-पैर की गतियों के रूप में प्रकट होगी।

मनोवैज्ञानिक नियम जानवरो पर भी इसी प्रकार घटित होता है। उदाहरणार्थ जब एक कुत्ते को मांस का एक टुकड़ा दिखाया जाता है, वह उछलता है और उसे खाने के लिए प्राप्त करने की आशा में, जिसका उसको अत्यधिक अभिलाषा होती है, भूँकता है। यही बात खाना प्राप्त करने अथवा दूसरे मुर्गे पर विजय प्राप्त करने में एक मुर्गे के सम्बन्ध में भी सत्य है। विजयी मुर्गा अपनी प्रसन्नता को बाँग देकर तथा मुर्गियों केदड़बे में अपने-आपको गर्व के साथ ऊपर उठाकर प्रकट करता है।

यह है प्रकृति का ताल और लयबद्ध नृत्य। आन्तरिक प्रेरणा की अभिव्यक्ति के रूप में नृत्य सम्पूर्ण जीव-जन्तुओं की विशेषता है।

उपर्युक्त सम्पूर्ण उदाहरण चक्रों के इस मनोवैज्ञानिक नियम की व्यापकता को सिद्ध करते हैं और मनुष्य भी इसी नियम का दास है।[1]

नृत्य की उत्पत्ति

जब प्रारम्भिक मनुष्य को अत्यन्त आवश्यक भोजन प्राप्त हुआ अथवा एक आक्रमणकारी भालू अथवा सिंह को परास्त करने के पश्चात् उसने चक्रों के इस मनोवैज्ञानिक नियम के अनुसार प्रसन्नता तथा सन्तुष्टि के भावों को प्रकट किया तो आरम्भ में मनुष्य की प्रेरणा, इच्छा अथवा मनोवेग उसके प्रतिबिम्ब तथा विचार के लिए इच्छा-शक्ति के पथ-प्रदर्शन से अन्तर्मुखी नहीं हो सके।

उसके अन्दर उत्पन्न शक्ति को कार्य द्वारा बाहर निकालने अथवा व्यय करने का एक ही मार्ग था और वह था बाह्य शारीरिक अंगचालनों द्वारा निकालना। मनुष्य के शरीर के इन्हीं अंगचालनों के रूप में नृत्य पृथ्वी पर दृष्टिगोचर हुआ। प्रथम प्रारम्भिक मनुष्य, जिसने अपने मन में मनोवेग की साधारण प्रेरणा का अनुभव किया और जिसने कृतज्ञता एवं सन्तुष्टि के इन भावों को ताली बजाकर, हँसकर, अपने कुरूप शरीर को आगे और पीछे को झुकाकर तथा अपने सिर को चारों ओर घुमाकर बाहर निकाला अथवा बाह्य रूप में प्रकट किया, मेरा विचार है वह आदमी मानव-इतिहास में सबसे पहला नर्तक था। विल्हैम वुंट (Wilhelm Wundt) नामक एक जर्मन शारीरिक विज्ञानवेत्ता भी हमारे इसी सिद्धान्त का समर्थन करता है, जब वह यह कहता है कि आरम्भ में नृत्य सम्पूर्ण मनुष्य की अभिव्यक्ति था।

एक आन्तरिक प्रेरणा की अभिव्यक्ति के रूप में नृत्य सम्पूर्ण जीव-जन्तुओं की भी विशेषता है। इसके सम्पादन में होने वाली गतियाँ

१. **पूर्ण सूचना एवं स्पष्टीकरण के लिए पाठक लेखक की पुस्तक** 'Life's Riddle Solved' **का अध्याय**—७ 'The Cosmic Law of Cycles' **पढ़ें**।

सम्बन्धित प्राणी में उसी सीमा तक प्रकट होती है, जिस सीमा तक उसकी जाति का विकास हुआ होता है। कीड़े-मकोडो तथा पक्षियो में नृत्य समागम हेतु प्रेम का एक अग है। नर एक-दूसरे से प्रतियोगिता करते हुए मादा के चारों ओर उसको आकृष्ट करने एव उसमे काम-वृत्ति की जागृति करने का प्रयत्न करते हुए नाचते फिरते है। नृत्य की चरम सीमा उस समय होती है जबकि मादा के अन्दर काम-वृत्ति पूर्ण रूप से जागृत हो जाती है और वह कीड़े-मकोडो तथा पक्षियो के राज्य के प्रतिनिधियो के इस विशेष प्रदर्शन रूप नृत्य मे विजयी प्रेमी से समागम करने का प्रयत्न करने लगती है। शलभ, तितलियाँ, अफ्रीका का शुतुर्मुर्ग तथा जलमुर्ग अपनी जाति की मादा को आकृष्ट करने और उसको जीतने के लिए प्रेम का नृत्य करने मे दक्ष आदर्श रूप जन्तु है। जंगली मनुष्य जातियाँ अपनी जाति में प्रेम के जीवन में इसी अभ्यास का अनुसरण करती है।

कुत्ते अपनी प्रसन्नता, सन्तुष्टि एवं अपने स्वामियो के प्रति प्रेम को प्रकट करते हुए हवा मे ऊपर उछल-उछलकर खुशी के मारे उनके चारो ओर नाचते है। घोड़े भी यही करते है तथा अन्य सब जन्तु भी ऐसा ही करते है, क्योकि नृत्य एक आन्तरिक प्रेरणा की शारीरिक गतियो द्वारा अभिव्यक्ति के अतिरिक्त अन्य कुछ नही है, जो प्रत्येक प्राणी के अन्दर उत्पन्न की जा सकती है और इसकी सन्तुष्टि उसी मनोवैज्ञानिक चक्र के नियम पर अवलम्बित है, जो सम्पूर्ण सृष्टि पर घटित होता है।

मनोवैज्ञानिक नियम, जैसा कि ऊपर वर्णन किया जा चुका है, यह है कि जब मनुष्य के अन्दर एक मनोवेग, एक भावना या इच्छा उत्पन्न होती है तो इसकी शक्ति या तो शारीरिक गतियो द्वारा बाह्य रूप मे व्यय की जानी चाहिए अथवा इसको मन के अगले उच्चतर स्तर पर अथवा मनुष्य के शरीर पर पहुँचा देना चाहिए जिससे यह जीवन-शक्ति तथा आत्मिक चेतना में परिवर्तित हो सके। जब तक इन दो बातों में

से कोई-सी एक नही हो जाती, तब तक इसकी प्रकृति के अनुसार यह भावना अथवा इच्छा अच्छे या बुरे मनोवेग अथवा मानसिक ग्रन्थि का रूप धारण नही कर सकती। इस प्रकार एक उद्वेगिक अथवा मानसिक ग्रन्थि उद्वेगो अथवा मानसिक सामग्री में अपनी जीवन-शक्ति के व्यय न होने से अथवा सन्तुष्टि प्राप्त न करने से भ्रान्त अवस्था मे एकत्रित हो जाती है। क्योंकि परिवर्तन की प्रक्रिया बहुत कठिन है और साधारण मनुष्य के लिए असम्भव है, अतएव सम्पूर्ण मानवी उद्वेग तथा भावनाएँ अपना मार्ग एव विकास हाथो को तीव्र गति से अथवा धीरे-धीरे हिलाने, मुँह की विभिन्न भावभगियो, दाँत दिखाने, कलाइयो को हिलाने, लात मारने और इस प्रकार की अन्य क्रियाओ के रूप में शारीरिक अथवा भौतिक अभिव्यक्ति द्वारा पाती है। इसलिए, नृत्य नियन्त्रण करने वाले उद्वेग अथवा विचार के अनुसार, एव मानसिक, उद्वेगिक तथा शारीरिक सन्तुलन के विकास की सीमा के अनुसार एकत्रित उद्वेगो और विचारो के लिए एक यथेष्ट विकास-द्वार का कार्य करता है और इस प्रकार उनके अन्दर उद्वेगिक एव मानसिक ग्रन्थियो के बनने को रोकता है। नृत्य मनुष्य के हृदय और मन मे पूर्वस्थापित उद्वेगिक तथा मानसिक स्थितियो को भी नष्ट करता है।

नृत्य का क्रमिक विकास

पूर्व-वर्णित मनोवैज्ञानिक नियम की प्रक्रिया मे नृत्य के प्राचीन एव अर्वाचीन सम्पूर्ण भेदों की उत्पत्ति हुई है। व्यक्तिगत द्वन्द्व-युद्ध अथवा सग्राम मे विजय अथवा पराजय मानव-जाति के सबसे पहले उद्वेगिक अनुभव थे और प्राचीन मनुष्य के इन अनुभवो के स्थायी भावों के प्रकाशन ने सैनिक अथवा युद्ध सम्बन्धी नृत्यों को जन्म दिया, जो इस पृथ्वी पर मनुष्य द्वारा सम्पादित सबसे पहले नृत्य थे। बाद में ज्यो-ज्यों प्रथम मानव जाति में धर्म की स्थापना हुई, त्यों-त्यो मनुष्य के श्रद्धा, धन्यवाद देने अथवा प्रार्थना करने के भावो ने उसके धार्मिक

नृत्यों को जन्म दिया। इन नृत्यो के विकास की प्रगति क्रमिक विकास तथा भावनाओं की आत्मानुभूति और मानव-जाति के विचारो की प्रगति के अनुसार होती गई।

सैनिक अथवा युद्ध सम्बन्धी नृत्य अपने सम्पादन एवं प्रकृति में नीरस तथा तीव्र गति वाले होते है। हाथ-पैरों की गति अधिक स्फूर्तिमय, तीक्ष्ण एव तीव्र होती है। युद्ध सम्बन्धी नृत्यो की अपेक्षा धार्मिक नृत्य अधिक आकर्षक, विस्तारमय और शारीरिक क्रियाओ—कदमो के ताल, शरीर को मोडना और हाथो तथा सिर को हिलाना आदि क्रियाओ—से परिपूर्ण होते है। डेविड लिविंग्स्टन नामक स्कॉटलैड के एक धर्म-प्रचारक एव अन्वेषक के मतानुसार "मनुष्य जो भी नृत्य करता था वह उसकी जाति, उसकी सामाजिक प्रथाओ एव उसके धर्म का प्रतीक था; क्योकि एक जगली जाति का व्यक्ति अपने धर्म का प्रचार उपदेश देकर नही करता वरन् नाचकर करता है।"

किसी जाति के लोक-नृत्य और लोक-सगीत तथा काव्य का अध्ययन करके एक मनुष्य यह बतला सकता है कि अमुक जाति कितनी सभ्य है और उसका क्रमिक विकास कितना हुआ है। यही नही, अपितु वह यहाँ तक बतला सकता है कि उसके संगीत तथा नृत्य के बनने मे कितना समय लगा और उस जाति की उत्पत्ति किस देश में हुई। किसी जाति, राष्ट्र अथवा वश की वास्तविक प्रगति का निर्णय करने के लिए यह एक निश्चित स्वाभाविक मापदण्ड एव स्तर है। क्रीट द्वीप मे हमको इन सैनिक एवं सामाजिक नृत्यों के सब अवसरों के अवशेष मिलते है। ये नृत्य अत्यन्त प्राचीन काल से हमारे समय तक सुरक्षित रखे गए है और क्रीट-निवासी अब भी अपने त्यौहारो पर अपने प्रसिद्ध संगीत-वाद्य, तीन तारों की वीणा के गाने के साथ उसका प्रयोग करते है, जिसको बजाने वाला उसे अपने घुटनों पर रखकर एक धनुषाकार यंत्र से बजाता है।

२

प्राचीन यूनानी नृत्य

नृत्य की श्रेणी भावना अथवा उद्वेग का प्रधानता, मानसिक चित्र और नर्तक की उस प्रवृत्ति पर, जिसको वह प्रदर्शित करना चाहता है, तथा स्वय मनुष्य की सौदर्न्य की परख करने की बुद्धि के विकास पर निर्भर होती है। इस कारण हम प्राचीन मनुष्यो के अन्तर्गत ऐसे नृत्य को पाते है जो अपरिष्कृत है, जिसमें सन्तुलन, सौन्दर्य तथा शरीर एवं हाथ-पैर की चपलताओं का अभाव है। क्रमिक विकास की हम जितनी ऊँची सीढ़ी पर जाते है, नृत्य उतना ही अधिक जटिल, सरस, सुन्दर एवं कलापूर्ण होता जाता है। नियम यह है कि नृत्य मनुष्य तथा उसके मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास के साथ-साथ पूर्णता की ओर गति करता रहता है।

प्राचीन यूनानियों के अन्दर हम नृत्य की निम्नलिखित मुख्य श्रेणियाँ पाते है, जिनका प्रयोग दीक्षित नर्तक एवं नर्तकी रंगमंच पर दुःखान्त एवं सुखान्त नाटकों में, मन्दिर के धार्मिक कार्यक्रमों में, सामाजिक समारोहों में, विवाहोत्सवों एवं मृतक संस्कारों के अवसरों पर और साधारणतः किसी भी अवसर पर शोक, प्रसन्नता एवं अपने स्थायी धार्मिक भावों को प्रकट करने के लिए होता था। बहुत से

सामाजिक अथवा जनता के कार्यों में कम प्रशिक्षित व्यक्ति भी नाचते थे जैसा कि हम आजकल करते हैं।

(१) **दि इम्मीलिया** (The Emmeleia)—यह नृत्य, जैसा कि इसका नाम प्रदर्शित करता है, ताल एव सौदर्य का नृत्य था और एक आपत्कालीन अगचालन अथवा नृत्य को प्रदर्शित करता था, जिसकी सुन्दरता एवं उच्च कला का व्यवहार अधिकतर प्लेटो तथा अन्य उच्च श्रेणी के व्यक्तियो ने किया है जिन्होंने इसका वर्णन अपनी रचनाओ में किया।

(२) **सिकिन्निस** (Sikinnis) - यह एक व्यग्यात्मक एव हास्यपूर्ण नृत्य था और नर्तक के एक विशेष प्रकार से शरीर को हिलाने तथा तीव्र गति से अंगचालन करने के कारण इसका यह नाम पडा था। प्रथम प्रकार के नृत्य की अपेक्षा यह नृत्य अधिक असगत था। सम्भवत: यह नृत्य उसी प्रकार का था जिस प्रकार का हमारा आधुनिक जेज नृत्य है, जिसमे द्रुतगति से अगचालन किया जाता है और घेरे के रूप में घूम-घूमकर शरीर को तोड-मोडकर हिलाया जाता है।

(३) **दि कोरडेक्स** (The Cordax)—यह एक प्रकार का अश्लील नृत्य था, जिसका समावेश सुखान्त नाटको मे किया गया था और इसका व्यवहार वे व्यक्ति किया करते थे जो मदिरा-पान करते थे। यह नृत्य मर्यादा एवं सजावट रहित था और इसमें अन्तर्निहित अंगचालन असंगत एवं हास्यास्पद होते थे (कुछ-कुछ उसी तरह का जिस तरह का हमारा जिटर-बग नृत्य है)। नर्तक अपनी कमर, कूल्हो तथा पैरो द्वारा अत्यन्त अश्लील अंगचालन की क्रिया करते थे। इस प्रकार के नृत्य की तुलना बचनालो के डिथिरेम्बिक नृत्य से की जा सकती है। इस नृत्य के अन्तर्गत बचूस (Bacchus) देवता के सम्मान में कुछ साहसी एवं उग्र प्रकृति के गीत गाये जाते थे और साथ-साथ उपर्युक्त प्रकार का नृत्य किया जाता था।

(४) **दि पिरहिक अथवा मेटीरियल नृत्य** (The Pyrrhic or Material Dance)—युद्ध के समय का अथवा पदार्थ से सम्बन्ध रखने वाला नृत्य—इस प्रकार के नृत्य मे जो मनुष्य नाचते थे वे पूर्ण रूप से शस्त्रो से सुसज्जित होते थे और शरीर की उन गतियो एव स्थितियो का अनुकरण किया करते थे जिनकी सहायता से शत्रु द्वारा किये जाने वाले घावो एव प्रहारो का निवारण किया जाता था। इसके अन्तर्गत झुकना, द्रुतगति से उडना, उछलना अथवा आगे को झुकना आते थे। आक्रमणकारी दल की प्रवृत्तियो का वर्णन अगचालन के अनुकरणो द्वारा—जैसे भाले को घुमाना और तलवार से निशाना मारते समय की स्थितियाँ—किया जाता था। अपने नियमो (Laws) में प्लेटो यह कहता है कि इसके समस्त शारीरिक आसनो सहित नृत्य की उत्पत्ति वाणी के अनुकरण मे हुई है, जिसका वर्णन नर्तक द्वारा अपने प्रत्येक अग के चालन तथा भावभंगियो से किया जाता था।

(५) **दि गीरेनोस अथवा स्टॉर्क नृत्य** (The Geranos or Stork Dance)—इसका प्रारम्भ डीलोस (Delos) द्वीप में हुआ था, जोकि अपोलो (Apollo) तथा आर्टीमिस (Artemis) का जन्म-स्थान था और एक धार्मिक तात्पर्य प्रकट करने वाला नृत्य था। यह थीसियस की कहानी का वर्णन करता था, जिसने क्रीट के मिनोटौर (Minotour)[1] को मारा था और इस प्रकार एथेस के नगर राज्य द्वारा राजा मिनोस (Menos) के पास कर के रूप मे वार्षिक भेजे जाने वाले एथेस के सर्वोत्तम वंशो के सात युवको एवं सात युवतियों के जीवन को बचाया था। इस नृत्य का प्रयोग लडके और लडकियाँ एक-दूसरे का हाथ पकड-कर घेरे के रूप मे नाचकर करते थे। नर्तक अवगुण्ठन का प्रयोग करते थे और उनके शरीर भी ढके रहते थे। उनके शरीरो की, सिर, पैरों और भुजाओ की क्रियाए पक्षियो के समूह (Geranoi) अर्थात् सारसों

१. आधा आदमी तथा आधा बैल के आकार की एक काल्पनिक आकृति।

के झुण्ड, जिससे इसका नाम निकला है, का अनुकरण किया करती थी।

नृत्य का प्राचीन इतिहास

प्राचीन यूनानी परम्परा के अनुसार रिया (Rhea) देवी ने क्रीट द्वीप में डिक्टे (Dikte) पर्वत केअन्दर जीअस (Zeus) को जन्म दिया, अड्रास्टीआ (Adrastea) और इडा (Ida) अप्सराओं ने डिक्टे पर्वत की सुन्दर गुफा में उसकी देख-भाल की तथा उसका पालन-पोषण किया। अमालथिया (Amalthea) बकरी ने उसे दूध पिलाया और मधु-मक्खियों ने उसके लिए मधु एकत्रित किया। शिशु देवता के रोने की ध्वनि उसके पिता क्रोनोस (Cronos) के कानों तक न पहुँचने देने के हेतु इस देवी ने अपने पुरोहित काउरेटीज (Kouretes) को नियुक्त कर दिया कि वे निरन्तर उसके पास में पाइरिक (Pyrrhic) नृत्य द्वारा, जोकि क्रीट का युद्ध करते समय का एक नृत्य था, तथा अपनी तलवारों और ढालों को एक-दूसरे पर मारकर शोर मचाते रहें और शस्त्रों की ध्वनि करते रहें। नृत्य का यह सबसे प्राचीन इतिहास है।

प्राचीन हेलिया (Heleia) नगर के स्थान पर क्रीट द्वीप में पालाइ-कास्ट्रो (Palaikastro) नामक बन्दरगाह में जो अन्तर्लेख की तख्ती प्राप्त हुई है उसमें प्राचीनतम अंकित गीत को काउरेटीज ने उस समय गाया था जब वह देवताओं के पिता जीअस के सम्मान में बाँसुरी के साथ में पाइरिक नृत्य कर रही थीं। यह प्राचीन नृत्य-गीत अनुवाद में इस प्रकार है—

ओ कोरस सर्वोच्च !
स्वागत तेरा—स्वागत तेरा
ओ कोरस सर्वोच्च !!
जल-पावक का स्वामी तू है,
दिव्य शक्ति का अधिपति तू है,
मण्डित-परिवेष्टित वेदी पर,

वीणा और बाँसुरी मिश्रित,
नृत्य तथा संगीतों में,
डिक्टे पर इस वर्ष निरन्तर—
बढ़ो और हर्षो ! ओ कोरस सर्वोच्च !
इसी भूमि को, वीर नर्चरस लाये तुमसे,
रहीया-पुत्र अमर जीयस को,
तुमसे रखा छिपाकर हमने,
नृत्य पद-ध्वनि से था उसको !
ओ कोरस सर्वोच्च !
और बढ़ाई होरे ने प्रतिवर्ष तभी से,
डिक्टे में सब ऋद्धि-सिद्धियां न्यारी,
जन-जंगल मे बैठ शान्ति की देवी,
कर रही सभी के पूर्ण काम वह प्यारी !
ओ कोरस सर्वोच्च !
हमको भी पूर्ण पात्र कर दो,
भेड़ों से पूर्ण क्षेत्र भर दो,
खेतों में पूर्ण राशि वर दो,
मध् और फलों में वृद्धि करो !
ओ कोरस सर्वोच्च !!
बढ़े हमारे नगर, बढ़ें सब भावी नागर,
बढ़ें यहाँ जल-पोत, बढ़े न्यायों के आगर,
ओ कोरस सर्वोच्च !!

अपोलो के प्रति होमर द्वारा रचित सूक्त मे माउंट ओलिम्पस में एक नृत्य का वर्णन इस प्रकार किया गया है—

जीअस की पुत्रियां—सुन्दर केशो वाली ग्रेसिज़ (Graces), बुद्धिमती आवर्स (Hours), हारमनी (Harmony), हेबे (Hebe) तथा वीनस (Venus)—परस्पर कलाई पकडकर नाचती है। वे पवित्र आर्टीमिस

(Artemis) के गाने पर नाचती है और हरमीज़ (Hermes) तथा एरीज (Ares) उनमें सम्मिलित हो जाती हैं। तब फीबस अपोलो (Phoebus (Apollo) स्वयं गम्भीरता एव शान के साथ कदम रखता हुआ हार्प (Harp) को बजाता है। उसके चारो ओर एक प्रकाशमय आभा दिखाई पडती है और सन्तुलित ताल-स्वर के नीचे उसके पैर चमकते हुए दृष्टि-गोचर होते हैं।

होमर द्वारा रचित इलियाड के अठारहवे अध्याय के पृष्ठ ६१६-२१ मे (XVIII, 616-21) विवाहोत्सव के अवसर पर एक नृत्य का वर्णन निम्नलिखित रूप मे दिया गया है:—

साथ-साथ सम्पन्न हो रहे,
ब्याह और वीरत्व प्रदर्शन।
निज कुञ्जो से, नव-वधुओ को,
सड़कों पर, प्रकाश मे लाये॥
वीणा बजाते, मुरलि सुनाते,
गाते गीत दिखाते नर्तन।
बाहर आकर दरवाज़ों पर,
खड़ी हुईं गृह-ललनाएँ॥
हर्षित होकर मुक्त कण्ठ से,
करती बहुत प्रशंसाएँ॥

होमर द्वारा रचित ओडिसि (Odyssey) के आठवे अध्याय मे पृष्ठ ४५३-६५ में एक प्रदर्शन नृत्य का वर्णन निम्न प्रकार से दिया गया है—

एलसीनस ने अपने बेटे,
लौडेमस एवं हैलिस को।
बुला, कहा, नाचो एकाकी,
नृत्य-कला में अद्वितीय हो॥

अपनी आख की ज्योति क्षीण होने पर विख्यात हस्तलेखक (Calligraphist) मिरालो द्वारा लिखी गई कविता का मूल हस्तलिखित पुस्तक से उद्धरण।

अफ़सोस ! छिन गई मेरी आँखों की ज्योति,
हाय, हाय, आखिर धोखा दिया मेरी आँखों ने !
लोग कहते हैं 'अपने लिखने के कारण मैंने खोया' उसे,
मैं कहता हूँ 'पर, दूसरों को सदा रोशनी ही दी मेरी कविता ने।'

उपरोक्त कविता की खोज मुहम्मद इस्माइल ने १०९२ ए० एच० में की।

प्रवीण-पालीबस-कृत सुन्दर,
एक बेगनी गेंद ग्रहण कर।
एक ने फेंकी उच्च गगन में,
अपने सुन्दर अंग मोड़कर ।।
ऊपर ही ऊपर द्वितीय ने,
पृथ्वी पर आने से पूर्व।
लपका उसको सरल उछल से,
दिखला निज चातुरी अपूर्व ।।
और इस तरह कन्दुक-क्रीड़ा,
तनिक देर तक कर सम्पन्न।
वे नाचे फिर अदल-बदल कर
बहुधा निजस्थान विभिन्न ।।
नवयुवकों की हर्ष-ध्वनि से,
गूँज उठा सारा आकाश।
और उस समय रंगभूमि में,
था कोलाहल का ही वास ।।

क्रीट के एक नायक एवं सरदार मेरियनीस (Meriones) का वर्णन करते हुए होमर उसको एक नर्तक कहकर उसका सम्मान करता है। वह अपनी नृत्य-कला में इतना प्रसिद्ध था कि उसकी नृत्य-कला की महत्ता की प्रशंसा यूनानी ही नहीं, वरन् ट्रॉय-निवासी (Troians) भी करते थे। कारण यह था कि समस्त युद्धों में, जिनको उसने अपने शत्रु योद्धाओं के साथ बहुत बार लड़ा था, उस स्फूर्ति एवं दक्षता से, जिसको उसने शस्त्रों के नृत्य से प्राप्त किया था, अर्थात् पाइरिक ने शत्रु को परास्त करने में उसकी सहायता की थी।

लेसडेमोनिया-निवासियों (Lacedaemonians) ने नृत्य-कला-मात्र को ही विकसित किया। पाइरिक तथा केरियाटिस (Cariatis) नृत्यों का प्रयोग सब करते थे। वे नृत्य पर उतना ही बल देते थे जितना युद्ध

के अभ्यासो पर। युद्ध-स्थल पर अपने युद्ध-जनित श्रम का निवारण करने के लिए वे नाचते थे।[1] इस प्रयोजन के लिए व्यायामशालाओ मे एक बाँसुरी बजाने वाला सदैव तैयार रहता था, जो अपने पैर से ताल लगाता था और उसकी बाँसुरी की ध्वनि पर नाचते हुए योद्धा लोग अपने-आपको अनेक समूहो मे विभाजित करके नृत्य के बहुत से रूपो का प्रदर्शन करते थे—कभी युद्ध करते हुए-से, कभी नृत्य करते हुए-से, कभी मदिरापान में मस्त सुरा-देवता बचूस (Bacchus) के समान, अथवा कभी मन्द गति से चलते हुए प्रेम की देवी वीनस के समान जान पडते थे।

नाचते समय वे दो गीत गाते थे। एक वीनस देवी को आने तथा उनके साथ नाचने एव कूदने के लिए निमन्त्रण था और दूसरा बचूस (Bacchus) देवता के लिए था जो "मेरे वीरो! प्रसन्न रहो; अपने कदम बढाओ, अपने पैरो के अगूठो को घुमाओ, इनको अधिक धीरे-धीरे रखो," से आरम्भ होता था।

शस्त्र धारण करके नाचने के क्रीट मे प्रचलित रूप पाइरिक (Pyrrhic, जिसका अर्थ आग है) की स्पार्टा-निवासियो ने एक विशेष उत्साह के साथ उन्नति की। इस प्रकार का नृत्य करते हुए नर्तक लाल रग के वस्त्र पहनते थे। इस सैनिक नृत्य का प्रयोग वे पाँच

१. **लेखक को भी उस समय इसी प्रकार का अनुभव हुआ था जब वह युद्ध-क्षेत्र क्रीट की घाटियों एवं पर्वतों मे दिन-भर कठिन परिश्रम करके अपने रेजीमेण्ट के साथ सायंकाल शिविर को लौट रहा था। वह भी अपने रेजीमेण्ट के आदमियों के साथ उसी प्राचीन पाइरिक (Pyrrhic) नृत्य मे सम्मिलित हुआ था, जो उन व्यक्तियों में से एक द्वारा बजाई जाती हुई प्रसिद्ध क्रीट बाँसुरी के साथ-साथ नाचा जा रहा था, जबकि नर्तक उसके चारों ओर एक वृत्त में दक्षता से घूमते एव उछलते थे। यह नृत्य युद्ध-क्षेत्र के दिन-भर के कठिन कार्य के पश्चात् श्रम दूर करने एवं आराम देने में मनुष्यों की सहायता करता था।**

वर्ष की आयु से करना आरम्भ कर देते थे।

प्लूटार्च हमको यह बतलाता है कि स्पार्टा में विशेष पर्वों के अवसरों पर पिथियन अपोलो (Pythian Apollo) के सम्मान मे नर्तकों के तीन वृत्त बनाये जाते थे। भाग लेने वाले क्रमश. बालक, युवक एव बूढे व्यक्ति होते थे। नृत्य करते समय बूढे व्यक्ति गाया करते थे—

"एक बार हम युवक, बलवान एव वीर मनुष्य थे।"

अपनी बारी पर युवक कहते थे—

"ऐसे आदमी अब हम है। यदि तुम्हें इसमें सन्देह हो तो आओ और परीक्षा करो।"

और बच्चे भी गीत में ही उनको प्रत्युत्तर देते थे—

"किसी दिन हम आप दोनों से शक्ति एवं वीरता मे कहीं अधिक होंगे।"

अपनी थैस्मोफोरियाजुसी (Thesmophoriazusae) में एरिस्टोफेनीज नृत्य के विषय में निम्नलिखित नियम निर्धारित करता है—

"तुममें से प्रत्येक अपने शरीर में गति उत्पन्न करो, आगे बढ़ो, अपने पैरों पर धीरे-धीरे एक वृत्त के आकार मे चलो; हाथ-से-हाथ मिलाओ; नृत्य की ताल पर चलो; तीव्र गति से चलो। गाने वालों की मण्डली के लिए इधर-उधर देखना तथा प्रत्येक दिशा में नेत्रों को घुमाना ही उचित लगता है।"

उसकी फ्रॉग्स (Frogs) नामक रचना मे जेन्थूस (Zanthus) तथा बचूस (Bacchus) दोनो एक युवती के साथ नाचने की उत्कट इच्छा प्रकट करते है, जिसकी ओर वे बहुत ध्यानपूर्वक देखते हुए दिखाई देते है। इस सुखान्त नाटक के अन्तर्गत नृत्य प्रोत्साहित पुरुषो द्वारा इयाचूस (Iacchus) के सम्मान में इल्यूजीनियन मिस्टरीज (Ileusinian Mysteries) के अन्तिम उत्सव में किया जाता है, जिसके अन्तिम दिन इयाचूस की प्रार्थना में बचूस की पूजा का डमीटर (Demeter) की पूजा के साथ मेल हो जाता है।

प्राचीन स्पार्टा में होरमोस (Hormos) अथवा गले के हार का नृत्य भी किया जाता था। इस नृत्य मे युवक और युवतियाँ नाना प्रकार के रग वाली कतार में नाचा करते थे। नर्तको की पक्ति का नेता एक युवक होता था, जिसका नृत्य पूर्णतः सैनिक के समान कदमो के मेल से बना होता था मानो वह तत्पश्चात् तुरन्त ही युद्ध-क्षेत्र मे जाने वाला हो। उसके पीछे सजातीय साथियो को लेकर मन्द-मन्द एव निर्भीकता के साथ कदम रखती हुई एक युवती चलती थी, फिर इनमे एक युवक मिलता था, जो नेता एव दूसरी युवती के साथ दूसरे युवक और दूसरी युवती मे मिल जाता था और यह स्त्री नेता के साथ उसी प्रकार कदम रखता था। इस प्रकार सम्पूर्ण नृत्य ऐसा प्रतीत होता था मानो यह पुरुष की वीरता एव स्त्री की शीलता की परस्पर एक शृङ्खला बन गई हो।

डेलोस (Delos) मे अपोलो के मन्दिर मे तब तक बलियाँ नही दी जाती थी जब तक उनके पीछे-पीछे नृत्य एव गाना न हो। इस प्रयोजन के लिए चुनी गई लडको की मडलियाँ बाँसुरी तथा सितार के स्वर के साथ-साथ नृत्य करती हुई प्रस्तुत की जाती थी। इन मडलियो द्वारा गाये जाने के लिए जिन धार्मिक गाने योग्य गीतो को चुना जाता था उनको हिपोरचिमाता (Hyporchemata) अथवा नृत्य-गीत के नाम से पुकारते थे। क्रीट मे आज भी इन प्राचीन नृत्यो मे भाग लेने वाले, बाँसुरी के बजाने वाले के चारो ओर नृत्य करते हुए इन दो छोटे कवितामय गीतो को परस्पर एव बाँसुरी बजाने वाले के साथ वार्तालाप करते हुए तथा एक-दूसरे को उत्तर देते हुए घटो तक गाते रहते है। जो मनुष्य इस प्रकार के सबसे अधिक एव सुन्दर गीता गाता है, वह सबसे उत्तम सगीतज्ञ समझा जाता है। समस्त समुदाय उसकी प्रशसा एव सराहना करता है।

इन नृत्य-गीतो मे से कुछ नीचे दिये जाते है जिनको क्रीट-निवासी आजकल मैंडिनेडीज़ (Mandinades) के नाम से पुकारते है और वे

नर्तकों द्वारा इन रंगीन एवं प्राचीन नृत्यों में क्रीट द्वीप के मनुष्यों के बहुत से पर्वों पर गाये जाते हैं। नर्तकों में से एक दूसरे को कहता है—

"मैं वीरता में कभी किसी मनुष्य से नहीं डरा हूँ। चाहे वह अपने दाँतों से लोहे की शलाखों को चबा जाय अथवा वह उनको निगल भी जाय।"

जिस नर्तक को सम्बोधन करके यह गीत गाया जाता है वह उत्तर देता है—

"यदि तुममें हो तो अपनी सम्पूर्ण वीरता एवं शक्ति संचित कर लो, क्योंकि मैं तुमको वार्तालाप करने की विधि सिखाना चाहता हूँ, क्योंकि तुम्हारी वार्तालाप करने की विधि दोषपूर्ण है।

एक शान्ति कराने वाला उत्तर देता है—

"यह संसार जो तुम्हारी आँखों के सामने है, बहुत कटुताओं एवं विपत्तियों से परिपूर्ण है और कोई निश्चित रूप से नहीं जानता कि ईश्वर क्या करने वाला है।"

अथवा इसी प्रकार के गीत के साथ—

"जिस संसार को तुम देख रहे हो, यह एक गोला है और चारों ओर घूमता है। कुछ आदमियों को यह ऊँचे उठा देता है जबकि अन्य मनुष्यों को नीचे फेंक देता है।"

अन्य ऐतिहासिक प्रमाण

हरोडोटस (Herodotus) नृत्य-कला एवं मनुष्य के ऊपर उसके सुप्रभाव के विषय में लिखता हुआ कहता है कि जिसको हम कानों से सुनते हैं उसकी अपेक्षा आँखों से देख लेने का प्रमाण अधिक विश्वसनीय है। स्वाँग सम्बन्धी (Pantomimical) नृत्यों में दोनों तात्पर्यों का मेल हो जाता है और इस कारण उनका प्रभाव अधिक पूर्ण होता है। यह इतना मनोहर है कि एक प्रेमी, जो ऐसे दृश्य को देखता है, तुरन्त इस तर्क पर पहुँचता है कि क्या प्रेम के पीछे आने वाली समस्त आप-

त्तियाँ, इन सजीव रंगो मे आँखों के सामने प्रस्तुत कर दी गई है और यह अत्यन्त दुराचारी व्यक्ति घर को ऐसा प्रसन्नचित्त लौटता है मानो उसने मस्त कर देने वाली मदिरा का पान कर लिया हो अथवा होमर के समय की दुःख-नाशक सुरा का एक प्याला पी लिया हो। इस बात के सूचक, कि वे पदार्थ हमारी प्रकृति से कितने मिलते-जुलते है जो इस दृश्य मे दिखाई पडते है तथा भावभगी एव दृष्टि-सकेतो की भाषा दर्शको के लिए कितनी सुबोध है, दर्शको के आँसू है जो बार-बार उनकी आँखो से निकलने आरम्भ हो जाते है जबकि कोई निराशा-जनक एव प्रभावोत्पादक वस्तु सामने प्रदर्शित की जाती है। परन्तु बचूनेलियन नृत्य भी, जो आयोनिया और पोण्ट्स मे इतना गम्भीर विषय बन गया है, केवल व्यग्यात्मक है जैसा कि वहाँ की जनता गाती है। ससार की प्रत्येक अन्य वस्तु की अपेक्षा न करते हुए वे अपने वन-देवताओ टिटान्स एव कोरीवेटीज गडरियो को देखने के लिए दिन-भर नाट्य-गृहो में बैठे रहते है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्रत्येक नगर में कुलीन एव सबसे महान् व्यक्ति नर्तक है, और कार्य मे लज्जा तो उनके पास तक नही आती और वे अपनी प्रशसा, अपनी कुलीनता, अपने सम्मान के पद और अपने पूर्वजो के गौरव की अपेक्षा नृत्य की विभिन्न कलाओ मे प्रवीणता प्राप्त करने को अधिक महत्त्व देते है।

प्रत्येक प्रकार के नृत्य मे नर्तक के मन मे उस बात का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत रहना चाहिए जिसको वह अपने शरीर द्वारा प्रकट करना चाहता है। तब वह अपने शरीर को तथा इसकी स्थितियो को, अपने हाथो को और अवयवो तथा कदमो को इसका सम्पादन करने के हेतु तैयार कर सकता है। वह अपनी भुजाओ एव शरीर की स्थिति को कायम रखने एव अपने पैरों को चलाने की अधिक-से-अधिक उपयुक्त विधि को अपनाता है जिससे सदा समन्वय बना रहे एवं तालमय गति द्वारा वह अपने-आपको एक प्रतिभामय रूप मे दिखा सके। साथ-ही-साथ

कदमों का ताल भी संगीत की लय के साथ मिलना चाहिए और उसके साथ-साथ प्रत्येक विराम तथा लय प्रकट होनी चाहिएँ। नर्तक की यह एकता एवं विधि अनिवार्य है और ये दर्शकों की दृष्टि पर एक बहुत ही रुचिकर प्रभाव डालती हैं। नृत्य वास्तव में गति का काव्य एवं आँखों के लिए संगीत है।

नृत्य के साथ-साथ चलने वाली प्राचीनतम वस्तुओं में तालियाँ बजाना, बाँसुरी, सारंगी, झाँझ लगा हुआ ढप, मजीरे, झाँझ, खजड़ी और गलियों में कभी-कभी ढोल आदि भी थी।

प्लेटो ने संगीत-विद्या एवं नृत्य को केवल मनोरंजन का साधन ही नहीं माना, वरन् धार्मिक उत्सवों एवं युद्ध के अभ्यासों का आवश्यक अंग माना है। गत शताब्दी के पूर्व भाग का प्रसिद्ध नर्तक कार्लो ब्लेसिस (Carlo Blassis) अपनी 'दि आर्ट ऑफ डांसिंग' (नृत्य की कला) नामक रचना में कहता है —"यूनानी नृत्य द्वारा प्राय मनोरंजन किया करते थे और हाव-भावों की उन्नति पर इसके तत्काल प्रभावोत्पादक होने के कारण बहुत सावधानी से इसका अभ्यास किया करते थे, जिसके कारण इसका नाम चेरोनोमिया (Cheronomia) अर्थात् अत्यन्त उत्पादक पड़ गया था। थीमिस्टम, एचिलस, पिरहस और सुकरात तथा इसी प्रकार के अन्य उदाहरण देने योग्य महान् व्यक्ति भी इसी कला द्वारा अपना मनोरंजन किया करते थे। संक्षेप में, प्राचीन युगों से असख्य महान् विद्वानों ने सफलतापूर्वक यह सिद्ध किया है कि नृत्य से हमारा मनोरंजन भी होता है एवं शिक्षा भी मिलती है। सम्पूर्ण शरीर अधिक स्वतन्त्रता के साथ गति करता है और सरल एवं रुचिकर प्रतीत होने लगता है।"

३

कम्पन का नियम

नृत्य के अन्तर्गत कम्पन का नियम एक महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। यह नियम सम्पूर्ण स्तरों पर तथा सब प्राणियों पर घटित होता है, अर्थात् स्थूल, शून्य सम्बन्धी, मनोवेग सम्बन्धी एवं मानसिक स्तरों पर। सम्पूर्ण जगत् में, सम्पूर्ण सृष्टि में प्रत्येक वस्तु पदार्थ के एक सूक्ष्म परमाणु से लेकर हमारे सौर जगत् के सूर्य तक कुछ निश्चित एवं निर्विवाद नियमों के अन्तर्गत निरन्तर एवं समान रूप में कम्पन करती है, जिससे इसके द्वारा सृष्टि का कार्य चलता रहता है और विश्व की स्थिति एवं क्रियाशीलता बनी रहती है। जिस क्षण विश्व कम्पन करना बन्द कर देगा, सम्पूर्ण सृष्टि की तुरन्त अचानक समाप्ति हो जायगी और सर्वशक्तिमान विश्वकर्ता की महारात्रि आ जायगी। तब पदार्थों में किसी प्रकार की गति नहीं होगी, न आकाश होगा, न चैतन्य विचार होगा; परन्तु आन्तरिक शान्ति अग्निकांड में तथा ईश्वर के शून्य जगत् के अन्धकारमय प्रकाश में होगी।

ध्वनि, जैसा कि विदित है, वायु के कम्पन अथवा प्रति सेकिंड १६ से ३२,७६८ कम्पन (चौथाई से १५वें अष्टक) तक वायु की लहरें मात्र है। कम्पन की यह चाल मनुष्य के कान द्वारा प्राप्त होकर

समझ सकने और सामान्य मनुष्य के मस्तिष्क द्वारा सोचे जा सकने की शक्ति की सीमा के अन्तर्गत आती है। ध्वनि के इन कम्पनों की चाल उस पदार्थ के अणुओं, परमाणुओं की अधिकता एव न्यूनता तथा उनकी व्यवस्था के अनुसार परिवर्तित होती रहती है, जिस पदार्थ में होकर ये प्रवाहित होते है। हवा में होकर ध्वनि की चाल प्रति सेकिंड १,०९० फीट है, हाइड्रोजन मे होकर ४,१९० फीट है, पानी मे होकर ४,७५० फीट है, तांबे में होकर १२,००० फीट है, और लोहे मे होकर ध्वनि के कम्पनो की चाल १६,००० फीट प्रति सेकिंड है।

कम्पन और बनावट

ध्वनि के सगीतमय होने के लिए यह आवश्यक है कि उसमें स्वर हो, अर्थात् कम्पन प्रति सेकिंड निरन्तर एक निश्चित सख्या मे प्रवाहित होती रहे। एक सगीतमय ध्वनि का स्वर लहरो की बनावट अथवा उत्पन्न कम्पनो की लम्बाई पर निर्भर होता है। इस नियम को सिद्ध करने के लिए एक व्यक्ति पियानो के लकडी के आवरण के ऊपर महीन रेत फैलाये और तब एक ही ध्वनि को बार-बार उत्पन्न करे। तब वह यह देखेगा कि रेत की रेखागणित सम्बन्धी लहरयुक्त आकृति बन गई है। स्वर को बदलने पर रेत की आकृति तुरन्त बदल जायगी। यही बात समुद्र या झील के रेतीले किनारे पर देखने में आती है। रेत की महीनता और उसकी बनावट लहरो की उस शक्ति एवं ताल के अनुरूप होती है जिससे वह किनारे पर टकराती है। स्थूल पदार्थ में सदा उन कम्पनो के अनुसार प्रतिक्रिया होती है जो उस शक्ति से उत्पन्न होते है जो इस पर कार्य करती है।

उपर्युक्त नियम के साथ-साथ एक दूसरा नियम भी है। एक पदार्थ की लहरे निकटवर्ती दूसरे पदार्थ मे पहुँचा दी जाती है। एक उत्तम पदार्थ के कम्पन एक निम्नतर अथवा उससे कम अच्छे पदार्थ में समान एव सहानुभूतिपूर्ण कम्पन उत्पन्न करते है। उत्तम पदार्थ के कम्पनों की

लहरें एक घटिया पदार्थ में प्रवेश कर जाती है तथा उन कम्पनो को उस उत्तम पदार्थ तक पहुँचा देती है जो उस घटिया पदार्थ की पृष्ठभूमि बनाता एव स्थिति के लिए नीव जमाता है। इस प्रकार इसके वाद के पदार्थ में भी उसी प्रकार के कम्पन उत्पन्न कर देता है। उदाहरणार्थ हम पियानो बजाते है। उसी कमरे मे यदि दूसरा पियानो है अथवा मेंडोलिन अथवा वायलिन को उसी स्वर पर बजाया जाता है तो इन समस्त वाद्य-यन्त्रो मे समान कम्पन उत्पन्न होते है और सबमें एकसी ही सगीतमय ध्वनि उत्पन्न होती है। मनुष्य के स्थूल, आकाश सम्बन्धी, भावात्मक एवं मानसिक शरीरो के ऊपर एक ही नियम काम करता है और घटित होता है। मनुष्य पूर्णता को उस समय पहुँचता है जबकि वह अपने अस्तित्व के इन चारो स्तरो पर समान रूप से और साथ-साथ एक ही प्रयोजन के लिए कार्य करता है। इसी तात्पर्य से सासारिक सन्तुलन और साम्य है। ये जब पूर्णता को प्राप्त होते है तो सरसता, ताल, स्वास्थ्य, शक्ति, प्रसन्नता, सफलता और हमारे जीवन के प्रत्येक अन्य सफल कार्य को सम्पादित करते एवं उत्पन्न करते है। प्राचीन यूनानी, क्रीट एव अन्य प्राचीन सभ्यताओ की तीन प्रकार की शिक्षण-प्रणाली का यही कारण था। वे युवकों को केवल शारीरिक शिक्षा ही नही देते थे, अपितु उनकी भावात्मक एवं मानसिक प्रकृतियों को भी यथोचित अभ्यासो एवं अनुशासन द्वारा प्रशिक्षित करते थे।

लगभग सब दशाओ में बीमारी उन सासारिक शक्तियो के सन्तुलन की अवहेलना का परिणाम-मात्र होती है जो हमारे अन्दर कार्य करती रहती हैं—विशेषतः मनुष्य के भौतिक शरीर में मानवी आकर्षण-शक्ति का उल्लंघन। जिस क्षण में भी हमारे शरीर में अथवा इसके किसी अंग अथवा अवयव में जीवन-शक्ति सामान्य बिन्दु से कम अथवा अधिक हो जाती है, उसी क्षण प्रकृति हमारे शरीर में शिथिलता उत्पन्न करके अथवा बीमारी द्वारा उसे सतर्क कर देती है। यह हमारे शरीर

अथवा इसके अवयवों के कम्पन की गति मन्द अथवा तीव्र हो जाने के कारण होती है। ज्यों ही मानवी आकर्षण-शक्ति और जीवन-शक्ति सन्तुलन की पूर्व सामान्यावस्था को प्राप्त हो जाती है, विषम अवस्था का लोप हो जाता है और स्वास्थ्य पुनः ठीक हो जाता है।

यथोचित तालमय नृत्य द्वारा स्वास्थ्य-लाभ

इस महान् सफलता को वही नर्तक प्राप्त कर सकता है जो उपर्युक्त नियमों एव अपने शरीर पर उनके प्रयोग को जानता है। अपनी भाव-प्रकृति में यथोचित सम्बन्धित मनोवेगो एव भावो को सक्रिय रूप से उत्पन्न करके, समुचित प्रकार के गाने को सुनकर अथवा स्वय गाकर इन सम्बन्धित मनोवेगो और भावों को शारीरिक मुद्रा-परिवर्तन प्रदान कीजिये। तव स्थूल शरीर तथा उसके अगो के यथोचित नृत्य के रूप में यथोचित सामान्य प्रकाशन द्वारा भावात्मक प्रकृति के समन्वयपूर्ण कम्पन उसके स्थूल शरीर के सूक्ष्म जीवित तत्त्वो पर स्थानान्तरित कर दिए जाते है, और उनमें भी उसी प्रकार के समन्वयपूर्ण कम्पन उत्पन्न कर दिए जाते हैं। इसका सम्पादन उचित ढग से पूर्ण भावना-शक्ति एव उत्साह के साथ किया जाय तो यह क्रम हमारे शरीर मे जीवन-शक्ति के प्रवाह और आकर्षण-शक्ति में सुगमता उत्पन्न कर देता है, और इस प्रकार मुख्य शक्ति का विच्छिन्न समन्वय एवं सन्तुलन स्वास्थ्य के लिए पुनः स्थापित हो जाता है।

प्राचीन पैथागोरस के अनुयायी (Pythagoreans), क्रीट-निवासी, यूनानी, मिस्र-निवासी, चैलडियन (Chaldeons), हिन्दू तथा समस्त प्राचीन सभ्यताओं के पुजारी अपने मन्दिरो में स्वास्थ्य-वृद्धि के लिए और निम्नतर आत्मा (Lower Self) को उस अवस्था तक ऊँचे उठाने के लिए, जहाँ पर प्रकृति के आध्यात्मिक राज्य (Spiritual Realm) के समन्वयपूर्ण कम्पन अपने अनेक प्रकार के शारीरिक एवं आध्यात्मिक लाभों सहित पात्रों पर स्थानान्तरित हो सकें और उनके अन्दर

प्रवेश कर सके, इस प्रकार के सरस सगीत एवं नृत्य-कार्यक्रमो का प्रयोग एक प्रचारक के रूप में तथा बीमारियो की चिकित्सा के साधन के रूप में किया करते थे।

स्टेनले हॉल (Stanley Hall) घोषित करता है कि ज्ञान-तन्तुओ को गति प्रदान करने के लिए, भावों को शिष्ट बनाने के लिए, इच्छा को शक्ति प्रदान करने के लिए और भावनाओं एवं बुद्धि का सम्बन्धित शरीर से समन्वय कराने के लिए नृत्य का पुनरावर्तन अनिवार्य है।

नृत्य को अनेक रोगों के लिए सर्वोत्तम उपचार बतलाने मे हिप्पोक्रेटस के सबसे अधिक सम्मानित शिष्य एक मत रखते है। सगीत ने भी रोगों की चिकित्सा में आश्चर्यजनक प्रभाव दिखलाया है। डिमोक्रीटस (Democretus) तथा थ्योफेस्टस (Theophastus) ने इसके चमत्कारो द्वारा बहुत समृद्धि प्राप्त की थी। प्लूटार्च (Plutarch) तथा बोटिअस (Boetius) ने ओरफियस (Orpheus), मूसीअस (Museaus), टर्पेण्डर (Terpender), थेलीटस (Thaletas), इस्मिनियस (Isminias), जैनोक्रेट्स (Zenocrates), हीरोफिलस तथा अन्य विद्वानो के विषय में लिखा है कि इन्होने इसी प्रयोजन के लिए सगीत का एक बहुमूल्य प्रयोग किया।

पैथागोरस तथा उसके अनुयायी विशेष सूक्तो के साथ विशेष संगीत का प्रयोग करते थे, जो वर्ष की प्रत्येक ऋतु के लिए भिन्न होते थे और व्याधि-विशेष तथा रोगी को अच्छा करने के लिए उसके स्वभाव पर प्रभावोत्पादक होते थे।

धार्मिक पूजा-पाठ सम्बन्धी नृत्य एवं जीसस

उपर्युक्त कारणों से समस्त राष्ट्रों के मन्दिरों में, समस्त उत्सवों पर, समस्त कालों में और संसार की समस्त सभ्यताओं में एवं समस्त दार्शनिक पाठशालाओं में नृत्य एक अनिवार्य अंग था। पैथागोरस के दार्शनिक सिद्धान्त में नृत्य एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता था और इसकी

दार्शनिक दृष्टि से बडी महत्ता मानी जाती थी। परम्परा के अनुसार माननीय प्राचीन शिक्षक पैथागोरस अपने शिष्यो को अपने पवित्र धार्मिक नृत्यों में ले जाया करते थे, और इसे क्रोटोना (Crotona) के प्रसिद्ध दर्शन-शास्त्र की पाठशाला की शिक्षा का एक आवश्यक अग समझा जाता था।

ईसाई धर्म का महान् शिक्षक जीसस (Jesus) भी एक औषधि के रूप मे, वैयक्तिक सेवाओ मे एव शिष्यो की बैठको मे तथा अपने घनिष्ठ अनुयायियो को इन्ही धार्मिक पूजा-पाठ सम्बन्धी नृत्यो का परिचय कराया करता था। आधुनिक युग के पैथागोरस के सबसे अधिक प्रतिष्ठित अनुयायी दार्शनिक मेनली पामर हॉल (Manly Palmer Hall) इस विषय में लिखते है —

"यह बिलकुल सम्भव है कि ऐतिहासिक जीसस ने उन माता-पिता के यहाँ जन्म लिया था जो वीरो की उस बस्ती के सदस्य थे, जिसको जोजेफस (Josephus) ने बड़े सम्मान के साथ लिखा है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह वीर जाति पैथागोरस द्वारा स्थापित की गई थी। ज्यो ही उसके राज्य का समय पूरा होने को आया, जीसस और उसके अनुयायियो की छोटी मण्डली को हिंसात्मक एव अनिवार्य रूप से जेरुसलम नगर की ओर घसीट लिया गया। ·····जो व्यक्ति उनसे घनिष्ठता रखते थे जब वे उनको मिथ्या समझने लगे तब जीसस ने अन्तिम बार उनको अपने निकट भ्रातृभाव से बुलाया और ओवर पर्व को अन्तिम भोजन के साथ मनाया। इस संस्कार के लिए अपने शिक्षक के दिवगत हो जाने पर क्रिया-कर्म करने की अपेक्षा बहुत अधिक करना था। यह कहा जाता है कि शिष्य तथा गुरु साथ-साथ गाया करते थे और सेंट आगस्टॉइन (St. Augustine) ने बिशप कोरीशियस (Bishop Coretius) के प्रति लिखे गए २३६वे पत्र में संगीत के शब्दों को सुरक्षित रखा है—

" 'मे खोलना चाहता हूँ और मे खुलना चाहता हूँ।
मे रक्षा करना चाहता हूँ और मे रक्षित होना चाहता हूँ।

मैं पैदा करना चाहता हूँ और मैं पैदा होना चाहता हूँ।
मैं तुम सबके साथ खुशी से गाना और नाचना चाहता हूँ।
मैं रोना चाहता हूँ और तुम सबको भी शोकमग्न करने की इच्छा रखता हूँ।
मैं सजाना चाहता हूँ और मैं सजाया जाना चाहता हूँ।
मैं तुम्हारे लिए दीपक हूँ, जो मुझको देखते हो।
मैं तुम सबके लिए द्वार हूँ, जो मुझको खटखटाते हो।
तुम, जो मेरे द्वारा किये गए कार्य को देखते हो, जो मैं कर रहा हूँ, उसे किसीसे कहना मत।
इस बातचीत में मैंने सब-कुछ कह दिया है।
और मुझे किसी प्रकार से धोखा नहीं दिया गया है।

"इस सूक्त के पश्चात् रोटी तोडते थे और प्याला आगे बढाते थे। तत्पश्चात् एपोक्रिफा (Apocrypha) में से एक जीसस एवं उसके शिष्यों ने इस रहस्य को एक धार्मिक कर्मकाण्ड सम्बन्धी नृत्य से मनाया और उसके पश्चात् कुछ बातों पर विचार-विनिमय किया जो संभवतः इन महात्मा को मालूम नही था। अन्तिम भोजन बुधवार को हुआ, अर्थात् अप्रैल के अन्तिम दिन सायंकाल को।"

हैवलॉक एलिस (Haveloch Ellis) नृत्य के सिद्धान्त विषयक फरवरी, १९१४ की अटलाण्टिक मैगजीन नामक पत्रिका में प्रकाशित एक लेख में लिखता है—

"प्राचीन मानव-जातियो में धर्म को जीवन का इतना अधिक महत्त्वपूर्ण अंग माना गया है कि नृत्य अनिवार्य रूप से एक सर्वोत्कृष्ट धार्मिक महत्ता धारण कर लेता है। नाचने से एक साथ दो बातें—पूजा एवं प्रार्थना—पूर्ण हो जाती थीं। केवल प्राचीन परिपाटी वाले ही नही, अपितु समस्त धर्म आरम्भ में और कभी-कभी कुछ सीमा तक सम्पूर्ण ही धार्मिक नाच-गान से सम्बन्धित रहे है। सम्पूर्ण विश्व में यही व्यवस्था रही है। आरम्भ के ईसाई धर्म में तथा प्राचीन हिब्रुओं में,

जो आर्क (Ark) के सम्मुख नाचते थे, इसका इतना प्रचलन नही था जितना आस्ट्रेलिया के आदि निवासियो मे है, जिनकी बड़ी-बड़ी चिकित्साएँ (Corrabaraes) वैद्यो द्वारा हाथ में लिये हुए पवित्र डण्डे द्वारा किये गए धार्मिक नृत्य हैं। प्रतीत होता है कि अमरीका की प्रत्येक इण्डियन जाति अपने निजी धार्मिक नृत्य रखती है, जो विभिन्न प्रकार के विशद तथा ऐसे अर्थों से युक्त है जिनको रोगी के अध्ययन में आधुनिक अन्वेषको ने केवल धीरे-धीरे प्रकाशित किया है।···जिसको कुछ विद्वान् ईसाई धर्म की सबसे प्राचीन ज्ञात धार्मिक क्रिया कहते है—जिसस का सूक्त जिसको द्वितीय शताब्दी का बतलाया जाता है, एक पवित्र नृत्य-मात्र ही है। तीसरी शताब्दी में यूसेबियस (Eusebius) ने बताया है कि थैरेपीट्स की पूजा का फिलो का जो वर्णन है वह ईसाई धर्म की प्रथाओ से सब स्थलों पर मिलता-जुलता है और उसका तात्पर्य नृत्य की बहुलता से था, जिसकी ओर वास्तव में यूसेबियस बहुधा ईसाई-धर्म सम्बन्धी पूजा के सम्बन्ध में संकेत करता है। कुछ लेखकों ने यह माना है कि ईसाइयों का गिरजाघर आरम्भ में एक रंगमहल (Theatre) था, जिसमें संगीत-मण्डली के लिए गाने का स्थान (Choir) ऊपर उठा हुआ रंगमच था। यह सिद्ध किया गया है कि शब्द चौयर (Choir) का अर्थ भी 'नाचने के लिए एक घिरा हुआ स्थान' है। यह निश्चित है कि राजा के सायंकालीन भोजन-सस्कार के समय राजभक्त अपने हाथों द्वारा भावभगी प्रदर्शित करते थे, अपने पैरों से नाचते थे एवं अपने शरीर को इधर-उधर फेंकते थे। क्रिसोस्टोम (Chsysostom) ने, जिसने ऐंटियोक में पवित्र मेज़ के चारों ओर इस व्यवहार की ओर संकेत किया है, इससे सम्बन्धित केवल अत्यधिक मदिरापान पर आपत्ति की है। इस प्रथा को तो वह भी परम्परागत एवं ठीक मानता था। जबकि एक ईसाई धर्म की पूजा में केन्द्रीभूत कार्य एक पवित्र नाटक है, एक पवित्र मूक अभिनय है, ईसाई धर्म एवं नृत्य का मेल केवल साधारण जनता की धार्मिक क्रियाओं और इसके बाद के और अधिक संक्षिप्त रूपों तक ही

सीमित नहीं था। स्वय नृत्य के विचार-मात्र ही प्राचीन ईसाई धर्म के अनुयायियो के लिए एक पवित्र रहस्यपूर्ण अर्थ का प्रतीक था, जो उसके वाच्यार्थ पर बहुत ध्यान देते थे, "हमने तुममें प्रेरणा उत्पन्न की, परन्तु तुमने नृत्य नही किया है।" ओरिजन (Origen) ने प्रार्थना की कि सब वस्तुओ से बढकर हमारे अन्दर अनिवार्य रूप से संसार के उद्धार के हेतु आकाश में नृत्य करते हुए नक्षत्रो का रहस्य हो सकता है। अग्रेजो के गिरजाघरो मे नृत्य चौदह वीशताब्दी तक चलता रहा है। नृत्य, जैसा कि हम समस्त ससार मे देख सकते है, इतना आवश्यक, पूर्णरूपेण मुख्य एव सद्धर्म का एक इतना आधारभूत अग बन गया है कि जब कभी भी एक नये धर्म का जो साहस प्रदान करने वाला धर्म है, केवल एक बुद्धि-मात्र पर अवलम्बित धर्म नही है, आविर्भाव हुआ है, उसमें नृत्य एव संगीत का सदैव विषेश स्थान रहा है, और सच पूछे तो नृत्य और संगीत के द्वारा ही किसी धर्म का प्रचार सम्भव हुआ है।

समस्त प्राचीन जातियो के देवताओ को नागर-नट के रूप मे प्रस्तुत किया जाता था, जैसे अपोलो, डायोनिसिस (Dionyses) ओसिरिस (Osiris), शिव (Shiv), बचूस (Bacchus) एव इसी प्रकार अन्य। लेखक का एक मित्र, मिर्ज़ा अहमद सोहराब, अपनी पुस्तक 'दि सौग ऑफ कारवाँ' अर्थात् 'काफिले का गीत' मे नृत्य के इस मुख्य विषय पर इस प्रकार लिखता है, "मै केवल उस ईश्वर मे विश्वास रख सका जो नाचना जानता था। मेरा ईश्वर एक अलौकिक नर्तक है।···मेरा ईश्वर नाचता भी है, परन्तु मुझे भय है कि इस पृथ्वी पर बहुत-सो का ईश्वर एक निष्क्रिय सत्ता वाला है। तालरहित, प्रतिभारहित, बुद्धिमत्ता के प्रकाशों से रहित, सौन्दर्य की अनन्त आकृतियों से रहित ईश्वर मेरे ध्यान में भी नही आता, जिनके द्वारा वह अपनी तालमय अनन्त सत्ता का प्रकाशन करता है।···मै चाहता हूँ कि तुम्हारा ईश्वर तुम्हे सौन्दर्य, समता, समन्वय, ताल एवं अत्यन्त प्रसन्नता प्रदान करने वाला हो। मै अपने संसार के नये ईश्वर को चाहता हूँ कि वह नाचे और वह मुर·

भाई हुई एव आनन्दरहित आत्माओं को नक्षत्रो जैसा बहुत अधिक प्रकाश प्रदान करे, क्योंकि अब मे जानता हूँ कि ससार की मुक्ति के लिए नक्षत्र आकाश मे नाच रहे है और अब मै यह जानता हूँ कि नाचना एवं प्रार्थना करना एक ही है। नाचना भी पूजा करना एवं प्रार्थना करना ही है, क्योंकि जिस प्रकार आकाश में नक्षत्र नाचते है उसी प्रकार देवता भी स्वय नाचते एवं खेलते है। नृत्य करना विश्व का भौतिक नियन्त्रण करना है। पूजा आदि में भाग लेने वाले नर्तक, जिनको अपनी कला के गुणो का ज्ञान रहता है, आत्मा के साथ आत्ममात् हो जाते है। ताल के साथ नाचना अनन्त ईश्वर के साथ एक ईश्वरीय देनयुक्त एव पूर्ण प्रकाशन को प्राप्त करना है। उनके मत बनो जिनके विषय में यह कहा जा सके—'हमने तुममे प्रेरणा उत्पन्न की, परन्तु तुम नाचे नही हो,' क्योकि अपने विधाता के पास पहुँचने की विधियो में से एक विधि संगीत, ताल एव नृत्य द्वारा पहुँचने की है। मे केवल उसी ईश्वर में विश्वास रख सका हूँ जो नाचना जानता है। मेरा ईश्वर एक अलौकिक नर्तक है और जब कभी मै नाचता हूँ मे उसकी पूजा करता हूँ।"

किस समय नृत्य किया जाय ?

जो कुछ पहले कहा जा चुका है उसमे मनुष्य को मालूम हो सकता है कि नृत्य से जो शारीरिक लाभ होते है वह नर्तक द्वारा अपने शरीर के अन्दर उत्पन्न किये गए जीवन-शक्ति के प्रवाह का कारण बनता है। यह उसी प्रकार होता है जिस प्रकार मोटर गाड़ी के टायर के अन्दर के ट्यूब में जब तक हवा रहती है, टायर मोटर गाड़ी के भार को वहन कर सकता है एव दौडता रहता है, जब हवा निकल जाती है तो मोटर गाड़ी चपटे टायर पर नही दौड सकती। फिर यदि मोटर गाड़ी के पहियों के टायर एव ट्यूब पुराने एवं निर्बल हैं तो ड्राइवर के लिए अपनी गाड़ी को सतर्कता से एवं धीरे-धीरे चलाना अधिक सुरक्षित रहेगा। जिस क्षण भी वह अपनी मोटर को सुरक्षा की

चाल की सीमा से ऊपर चाल पर चलाना आरम्भ कर देता है तो गाड़ी के पहिये के टायर का फट जाना अवश्यम्भावी हो जाता है, जिसका परिणाम बहुधा घातक होता है। इसी प्रकार जब नर्तक का शरीर उसके स्वामी द्वारा किसी प्रकार की अवहेलना एवं इसके अनुपयुक्त प्रयोग के कारण, दूषित खान-पान और बीडी-सिगरेट आदि पीने से तथा अन्य अनेक प्रकार के अनुपयुक्त प्रयोगों से शिथिल पड़ जाता है तो व्यक्ति के लिए यह हितकर होता है कि वह साधारण गति से नाचे अथवा तीव्र गति से नाचने को बिलकुल ही त्याग दे और विशेषकर पचास वर्ष अथवा साठ वर्ष की आयु के पश्चात् जब मनुष्य इन विरुद्ध परिस्थितियों में अधिक परिश्रम चाहने वाले नृत्यों में लग जाता है तो रक्त-प्रवाह की गति अधिक तीव्र हो जाती है और स्नायु-जाल में जीवन-शक्ति की गति सामान्य गति की अपेक्षा अधिक वेगवती हो जाती है। रक्त-शिराओ एवं स्नायु-केन्द्रों पर रक्त का दबाव उससे अधिक हो जाता है जितना धमनियो, केशिकाओं, हृदय में वापस रक्त पहुँचाने वाली नाड़ियो एव वात-नाडियों की दीवारें सुगमतापूर्वक सहन कर सकती हैं। जिस समय सुरक्षा का विन्दु पार हो जाता है तो नाडियाँ फट जाती हैं, जिसका परिणाम नर्तक के लिए बहुत दु:खदायी एवं घातक होता है।

परन्तु उस मनुष्य के लिए, जो एक सामान्य जीवन व्यतीत करता है, जिसका रक्त-स्रोत पवित्र है और धमनियों तथा अन्य रक्त-नाड़ियों और शिराओं की दीवारें स्वस्थ, लचीली एवं सजीव रखी जाती हैं, इस प्रकार का भय कदापि उपस्थित नहीं होता। रक्त-नाड़ियाँ और वात नाड़ी-मण्डल नृत्य द्वारा उत्पन्न किये गए अतिरिक्त दबाव को सहन कर सकते हैं। रक्त-प्रवाह के रुक जाने से उत्पन्न रक्त-स्रोत और शरीर के बहुत से कोनों, अंगों एवं जोड़ों के अन्दर उत्पन्न हो जाने वाले समस्त विकार अब रक्त-नाड़ियों एवं जीवन-शक्ति को दबाव डालकर संचालित करने से अलग एवं दूर हो जाते हैं और नर्तक के

अच्छे होने, पुनः स्वास्थ्य-लाभ हो जाने और सुखमय जीवनयापन करने पर प्रभाव पडता है।

इस कारण कोई भी विचारशील और अच्छा नर्तक, जो एक दीर्घायु तक नर्तन करते रहने की अभिलाषा रखता है, अपने शरीर के, जोकि उसकी आत्मा का मन्दिर है दुरुपयोग को सहन नहीं कर सकता। अनियमित रूप से खाने-पीने, बीडी-सिगरेट पीने, आवश्यकतानुसार नीद में कमी होने से और अन्य दुरुपयोगों से, जो उसके सामान्य शरीर को तथा उसके कार्यों को प्रभावित करते हैं तथा उनकी शक्ति को कम करते हैं, वह अब भी सफलतापूर्वक एवं निर्भयता के साथ नाचते रहने की आशा नहीं रख सकता।

श्वास लेने की विधियाँ

श्वास ही जीवन है। एक मनुष्य बिना खाना खाए चालीस दिन से भी अधिक जीवित रह सकता है, तीन दिन तक बिना पानी के रह सकता है, परन्तु बिना हवा के कुछ मिनट तक ही जीवित रह सकता है। अतएव समस्त नर्तकों के लिए शुद्ध वायु में यथाविधि श्वास लेने की अत्यधिक महत्ता ही इस व्यायाम की नीव है। जब वायु अशुद्ध होती है, तब एक व्यक्ति के लिए कमरे की दूषित वायु मे श्वास लेने की अपेक्षा न नाचना ही हितकर है। इन अहितकर एवं अप्राकृतिक परिस्थितियों में एक बडा भार शरीर में प्रवाहित होने वाले रक्त में पहले से विद्यमान भार में जुड़ जाता है। अधिक परिश्रम चाहने वाले नृत्य में मानव-शरीर के अगों को इस असाधारण क्रिया में प्रयोग करने के लिए अधिक ओषजन (Oxygen) की आवश्यकता होती है, इसलिए श्वास सामान्य, पूरा एव तालमय होना चाहिये, जिसमें अन्दर जाने के लिए शुद्ध वायु यथेष्ट मात्रा में होनी चाहिए।

यह बात भली भाँति विदित है कि अधिकांश मनुष्य सामान्य एवं स्वाभाविक रूप से श्वास लेना नहीं जानते। वे अपने वक्षःस्थल के केवल

ऊपरी भाग से ही श्वास लेते हैं और अपने फेफड़ों की केवल चौथाई अथवा तिहाई शक्ति को प्रयोग में लाते हैं। फेफड़ो की समस्त खराबियो तथा इसी प्रकार की अन्य बीमारियो और अवस्थाओ, जोकि रक्त के अन्दर यथेष्ट मात्रा में ओषजन के न पहुँचने से एव इसके विष के यथेष्ट मात्रा में बाहर न निकलने से हो जाती है, का उत्तरदायी दोषपूर्ण एव विषम ढग से श्वास लेना है।

वह नर्तक, जो बिना थकान उत्पन्न हुए और बिना श्वास फूले नाचना चाहता है, इस बात का ज्ञान अवश्य रखे कि श्वास स्वाभाविक एवं गहरा हो और यह कि ताल के साथ श्वास किस प्रकार लेना चाहिए। उसको अपना मुँह बन्द रखना चाहिए और नथुनो द्वारा अपने फेफडो के नीचे के भाग को वायु से प्रथम, तब मध्य भाग को तथा अन्त में ऊपरी भाग को भरकर गहरा और पूरा श्वास लेना चाहिए। वायु मे विद्यमान ओषजन को फेफडो के वायुपूरित छिद्रों से निर्मित कोमल दीवार में होकर फेफडो के रक्त में समा जाने के लिए समय देने के हेतु वायु को फेफडों के अन्दर कुछ देर के लिए रोकना आवश्यक है। तब फिर वायु को नथुनों द्वारा धीरे-धीरे बाहर निकालना चाहिए। इस बात का निरीक्षण किया गया है कि सावधानी से श्वास लेने से बहुत से अच्छे परिणाम निकले हैं। इस प्रकार श्वास लेने मे मनुष्य को श्वास लेने के कार्य में पूरी तरह से सचेत रहना चाहिए और साथ-साथ उस वायु को पूर्णतया ग्रहण करना चाहिए जिसको वह एक गुलाबी रग की शक्ति अथवा सत्त्व से युक्त होने पर श्वास द्वारा अपने फेफड़ो के अन्दर पहुँचाता है और इस प्रकार अपने फेफडों को पूर्णतः वायु एव जीवन-शक्ति से भरता है। यह देखते रहना चाहिए कि अग्नि के समान शक्ति, जो जीवन-शक्ति अथवा प्राण है, फेफडो में समा जाय और वहाँ से उसके सम्पूर्ण शरीर को पूरित करती हुई, उसको जीवन-शक्ति, बल, तीव्र गति एव जीवन प्रदान करती हुई, सम्पूर्ण दिशाओ में फैल जाय। जब वह अपने श्वास को बाहर निकालेगा तब वह उसको उन गैसों तथा अन्य बेकार एवं विषैले

पदार्थों से युक्त कर देगा जिनको वह अपने शरीर से बाहर निकालता है।

श्वास लेने के इन व्यायामों के समय, जिनको मनुष्य को प्रातःकाल अथवा दिन-रात में किसी भी समय खुले मैदान में अथवा खुली हुई खिडकी के सामने करना चाहिए, मनुष्य को अपना शरीर सीधा, वक्ष स्थल ऊपर को उठा हुआ, ठोडी अन्दर को झुकी हुई, कन्धे पीछे को झुके हुए रखने चाहिएँ। ताल के साथ श्वास लेने से रक्त-प्रवाह में किसी प्रकार की अडचन नही पडती और इस व्यायाम के लाभो मे वृद्धि होती है। इस व्यायाम को आरम्भ करने से पूर्व अन्दर और बाहर को छोटे-छोटे साँस लेकर मनुष्य को फेफडों में भरी हुई समस्त दूषित वायु को बाहर निकाल देना चाहिए।

जिस ताल का प्रयोग मनुष्य को इस व्यायाम मे करना है उसमें मनुष्य की शारीरिक बनावट, उसकी आवश्यकताओं, विकास एवं शक्ति के अनुसार परिवर्तन हो जाता है। मनुष्य इसको बहुत नीचे अनुपात में आरम्भ कर सकता है, जिससे उसे श्वास लेने में किसी प्रकार का प्रयास नही होगा। वह इसको ६ . ६ : ६ के अनुपात से आरम्भ कर सकता है—छः तक की गिनती तक श्वास अन्दर को खीचना, छ. तक की गिनती तक हवा को फेफडो में रोकना तथा छः तक की गिनती तक श्वास को बाहर निकालना। यह और अधिक अच्छा है तथा परिणाम और अधिक सन्तोषजनक निकलते है, जब श्वास की प्रक्रिया में यह गिनती नाडी-स्पन्दन के साथ-साथ चलती है। श्वास की प्रक्रिया एव रक्त के प्रवाह का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध हो जाता है। धीरे-धीरे मनुष्य तालमय श्वास की प्रक्रिया के अनुपात को ७ : ७ : ७, ८ : ८ : ८, ९ : ९ : ९ अथवा १० : १० : १० तक बढा सकता है। इस प्रकार श्वास लेने की प्रक्रिया के बीच में कभी रुकना नही चाहिए, जोकि इस विज्ञान में श्वास का सबसे सरल व्यायाम माना जाता है।

नृत्य करने में जब नर्तक का श्वास फूल जाता है और वह थकने लगता है तो उसको गहरे श्वास लेना और अपने फेंफड़ो को हवा से पूरी तरह भरना आरम्भ कर देना चाहिए। यद्यपि श्वास को अन्दर खीचने और बाहर निकालने में वह गिनती के ताल का अनुसरण करने में समर्थ भले ही न हो सके, परन्तु उसको गाने की लय के साथ श्वास को अन्दर खीचना चाहिए और तब तक वह आराम के साथ हवा को अपने फेफड़ों के अन्दर रोक सकता है। उस जीवन-शक्ति को देखते हुए जो उसके शरीर को पूरित करती है, उसे श्वास रोकना चाहिए और तब फिर सगीत की लय के साथ-साथ बाहर निकालना चाहिए। नृत्य मे अपने-आपको हल्का एव तीव्र गति प्रदान करने के हेतु नर्तक के लिए यह अच्छा होगा कि वह अपने साथी से बातचीत करने के स्थान मे हवा और जीवन-शक्ति के पूरे-पूरे श्वास ले। सुन्दर नृत्य एवं अपनी शक्ति की सुरक्षा के लिए एक मुख्य बात विश्राम लेने की कला एवं विधि की है। नृत्य करने में आराम जितनी पूरी तरह से मिल सकेगा नृत्य उतना ही स्वाभाविक एव उत्कृष्ट होगा और नर्तक बिना थकान उत्पन्न हुए अधिक समय तक नर्तन कर सकेगा। नर्तक के शत्रुओं में सबसे बड़ा शत्रु यह थकान है। नृत्य करने मे शरीर को पूरा-पूरा विश्राम देने एवं उपर्युक्त श्वास सम्बन्धी व्यायाम करने से ही थकान दूर हो सकती है।

प्रातःकाल उठने पर क्रमश. प्रतिदिन गर्म व ठण्डे पानी से पैरों को धोना प्रत्येक मनुष्य के लिए और विशेषकर एक नर्तक के लिए बहुत अच्छा अभ्यास है। यह दैनिक कार्यक्रम पैरो के अन्दर रक्त-प्रवाह को शक्ति प्रदान करता है और उनको स्वस्थ, स्फूर्तिमय, जीवित, चिकनी एवं कोमल त्वचा से युक्त बनाता है, जोकि नर्तक के लिए बहुत ही अधिक आवश्यक है, क्योकि वह अपने पैरो से नाचता है।

नर्तक के लिए इस महत्त्वपूर्ण विषय में निम्नलिखित अन्य सुझाव एवं परामर्श अहितकर न होंगे। नृत्य करते समय शृङ्गारपूर्ण वासनाएँ हृदय से पूर्ण रूपेण बाहर निकाल देनी चाहिएँ। विरोधी लिंगों के

साथियों में निष्काम आकर्षण एवं सराहना होनी चाहिए, परन्तु यह इससे अधिक नहीं बढनी चाहिए। टर्प्सिकोर की दिव्य कला, नृत्य, के समय इस आकर्षण एवं सराहना को नर्तकों के शरीरों की समन्वयपूर्ण प्रेरणा से पूरित एवं तालमय गतियों के रूप में प्रकट किया जाना चाहिए। यदि नर्तक या नर्तकी अपने विचारों को आगे पहुँचाने की त्रुटि करता है और उसके मन में लिंग-भावना उत्पन्न हो जाती है तो सम्भव है कि अपने सूक्ष्म, कलात्मक प्रकाशन एवं नृत्य की महान् कला के गौरव को खो बैठे और उसे सूक्ष्म वृत्ताकार गुप्त मार्ग में अपनी शक्ति के ह्रास को सहन करना पड़े। कोई भी व्यक्ति अपने-आपको परस्पर-विरोधी दो कार्यों में लगाकर दोनों को सुचारु रूप से नही कर सकता।

सुन्दर नृत्य के लिए नियम

निम्नलिखित दस नियमो में मे वास्तविक अच्छे नर्तक के लिए आवश्यक बातें देता हूँ—

(१) अच्छा नर्तक सदा अपने कदमो और शारीरिक गतिविधियों को पूर्ण रूप से संगीत के साथ साधकर रखता है।

(२) उसको कभी मदिरा का पान किये हुए नही होना चाहिए।

(३) संगीत की ध्वनि एव लय के कारण वह उत्साह एवं भावनाओं से परिपूर्ण रहता है। वाद्य-यन्त्रों द्वारा प्रस्तुत किये जाने वाले संगीत की वह सजीव अभिव्यक्ति होता है।

(४) उसकी समस्त शारीरिक गतिविधियाँ तालमय एवं मनोहर होती हैं और उसका सम्पूर्ण शरीर एक सुन्दर प्राणी, चलती-फिरती प्रतिमा को प्रस्तुत करता है, जिसकी प्रत्येक व्यक्ति सुन्दर सराहना करता है और पूर्ण रूप से उसका आनन्द लेता है।

(५) अच्छा नर्तक शीघ्र नही थकता और न उसको अधिक पसीना ही आता है, क्योंकि वास्तव में नाचना कठिन एवं थकाने वाला शारी-

पूर्ण नृत्य मनुष्य के अन्दर वाञ्छनीय अवस्था लाने में धीरे-धीरे सहायता करता है। इसलिए समस्त प्राचीन ज्ञान की पाठशालाओं में सुन्दर एवं समन्वयपूर्ण नृत्य को महत्ता प्रदान की गई है। समस्त राष्ट्रों, समस्त स्थानों, समस्त सभ्यताओं तथा समस्त कालों के प्राचीन मन्दिरों में उस ईश्वर की पूजा करने में धार्मिक नृत्य का प्रयोग किया जाता था, जो सब प्रकार सुन्दर एवं सब प्रकार समन्वयपूर्ण है तथा समस्त जीवन, समस्त प्रसन्नता, सम्पूर्ण स्वास्थ्य एव समस्त प्रेम का दाता है।

परिशिष्ट

अन्य दिव्य कलाओं की भाँति नृत्य को आजकल बहुधा पूर्ण रूप से गलत समझ लिया जाता है। साधारण रूप से हम यह कह सकते हैं कि नृत्य का दुरुपयोग किया जा रहा है। इस प्रकार इसको इसके उच्च स्थान, मन्दिर, से नीचे गिरा दिया गया है और इसको जनता के नृत्य-भवनों में घसीटा जा रहा है और गन्दे रीति-रिवाजों में इसका शोषण किया जा रहा है। इन स्थानों पर कोई भी अपनी इच्छानुसार अतिथि-सेविका को जितने नृत्यों के लिए वह चाहे प्रति नृत्य निश्चित मूल्य पर अपने साथ नाचने के लिए खरीद सकता है। इन समस्त सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत स्थानों पर इनके स्वामियों अथवा प्रबन्धकों के आर्थिक लाभ के हेतु नृत्य स्त्री-पुरुष प्रशंसकों की प्राप्ति का केवल साधन बन जाता है। इस प्रकार नृत्य दूषित हो गया है और इसने अपना वास्तविक प्रयोजन खो दिया है, जो कि मनुष्य की आत्मा को सर्वोच्च अनुभवों और स्थायी भावनाओं की अभिव्यक्ति है। इस प्रकार साधारण नृत्य को अधःपतित एवं भ्रष्ट कर दिया गया है और इसका प्रयोग पुरुषों और स्त्रियों के अन्दर की कामुकता के निम्नतम तथा सबसे पतित दृष्टिकोण और अभिव्यक्ति को प्रकाशित करने के प्रयोग में लाया जा रहा है।

इस प्रकार तथा इन दशाओं में साधारण जनता वस्तुओं के वास्तविक कारण को नही जानती और जो उसके द्वारा किये जाने वाले कार्यों का स्पष्ट अर्थ है उसको तथा प्रयोजन को नही समझ पाती, और उनके चंगुल में पड़ जाती है जो अपोलो तथा नौ म्यूज़िस (संगीत की देवियों) की दिव्य कला का शोषण करते है। मेरे विचार में सुन्दर नृत्य-कला के विरुद्ध इस प्रकार के मामलों की व्यवस्था सबसे अधिक क्रोध उत्पन्न करती है।

इस पुस्तक के पहले पृष्ठो में हमने देवताओ द्वारा इस दिव्य कला की उत्पत्ति, मनोविज्ञान एवं सिद्धान्त देने का प्रयत्न किया है। जब तक नृत्य को पवित्र रखा जाता है और इसका उचित प्रयोग किया जाता है, यह मनुष्य में एक सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण प्रेरणा उत्पन्न करने का काम देता है, और मनुष्य के अन्दर उदारता, सामाजिकता, महानता, शान्ति एवं सन्तोष उत्पन्न करता है। नृत्य एक विश्व-व्यापक भाषा है, जिसको किसी भी जाति का, किसी भी राष्ट्र का तथा विश्व के किसी भी भाग का पुरुष अथवा स्त्री समझ और परख सकता है। यही बात सगीत एवं गाने के विषय मे भी सत्य है। मनुष्य की आत्मा की केवल ये तीन अभिव्यक्तियाँ ऐसे उपयुक्त साधन है जो अन्य समस्त मनुष्यों की भावनाओ को प्रभावित करते है। मनुष्य को उसके मनोवेगो ही द्वारा प्रभावित एवं नियन्त्रित किया जा सकता है। समस्त धर्म इसी मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त पर आधारित है तथा इस प्रकार वे ससार के करोड़ों व्यक्तियों को उनके मनोवेगों को प्रभावित करके, प्रभावित एव नियन्त्रित करने में समर्थ है। यही रहस्य है और इसीसे धर्म को एवं इसके विश्वव्यापी प्रभाव को और आरम्भ से अब तक जातियों, राष्ट्रों एवं वंशों के नियन्त्रण को शक्ति प्राप्त होती है। मनुष्य की पाशविक वृत्तियों को नियन्त्रित करने का, उसके मनोवेगों को प्रेम एवं शान्ति के साथ प्रभावित एवं जागृत करने के अतिरिक्त संसार में कोई भी नियम, शक्ति अथवा साधन नहीं है।

यही कारण है कि समस्त प्राचीन सभ्यताओ ने समस्त संसार में अपने धार्मिक एवं सार्वजनिक पर्वों तथा उत्सवो में इन तीनों ललित कलाओ का बहुत अधिक प्रचार किया है। हमारा परामर्श यह है कि हमें अपने आधुनिक देशीय, प्रान्तीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मेलों के स्थान मे अथवा इनक साथ-साथ सार्वजनिक नृत्य, सगीत एव गाने की व्याख्या तथा रंगीन एव कलात्मक प्रदर्शन भी करने चाहिएँ। दूसरे राष्ट्रो तथा देशो के नागरिकों में धर्म-परिवर्तन का प्रचार करने के लिए हमें उपदेशकों के स्थान में, जिन मनुष्यो को हम अपना मित्र बनाना चाहते हैं और हमको विश्व-भर के व्यक्तियो को अपना मित्र बनाना चाहिए, उनके पास उनके हृदयो को विशाल बनाने के लिए और उनके मनोवेगो और इच्छाओ को अन्य मार्ग पर लगाने के लिए सगीत-मडलियों, भजन-मंडलियों एवं नृत्य-मंडलियों को भेजना चाहिए। नृत्य, जोकि विश्वव्यापी कला है, इस कार्य को कर सकता है। एकमात्र यही एक ऐसी भाषा है जिसको सब समझ सकते हैं और जो हमारे अन्दर मित्र-भाव, शान्ति और परस्पर एक-दूसरे की बात को समझ सकने की शक्ति उत्पन्न करती है। ससार के सब भागो में और सब जातियों के पास जो हम धार्मिक, व्यापारिक एवं सैनिक उपदेशक भेजे जा रहे हैं, ये वैमनस्य, सन्देह एव मिथ्या-भावना उत्पन्न करते हैं और ये शीघ्र ही अथवा कुछ काल के पश्चात् घृणा, प्रतिद्वन्द्विता, व्यापारिक प्रतियोगिता एवं युद्ध की भावना उत्पन्न करने का कारण बन जायँगे। मनुष्य से सम्पर्क स्थापित करने तथा उसकी मनोवृत्तियों को परिवर्तित करने के ठीक मार्ग एवं सत्य रहस्यों की ओर इस व्याख्या में संकेत कर दिया गया है। बुद्धिमान मनुष्य इस सूत्र का, इस मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त का, अनुसरण एव प्रयोग विश्व-भर को समझाने के लिए, उससे मित्रता स्थापित करते के लिए एवं समस्त विश्व में शान्ति स्थापित करने के लिए करें।

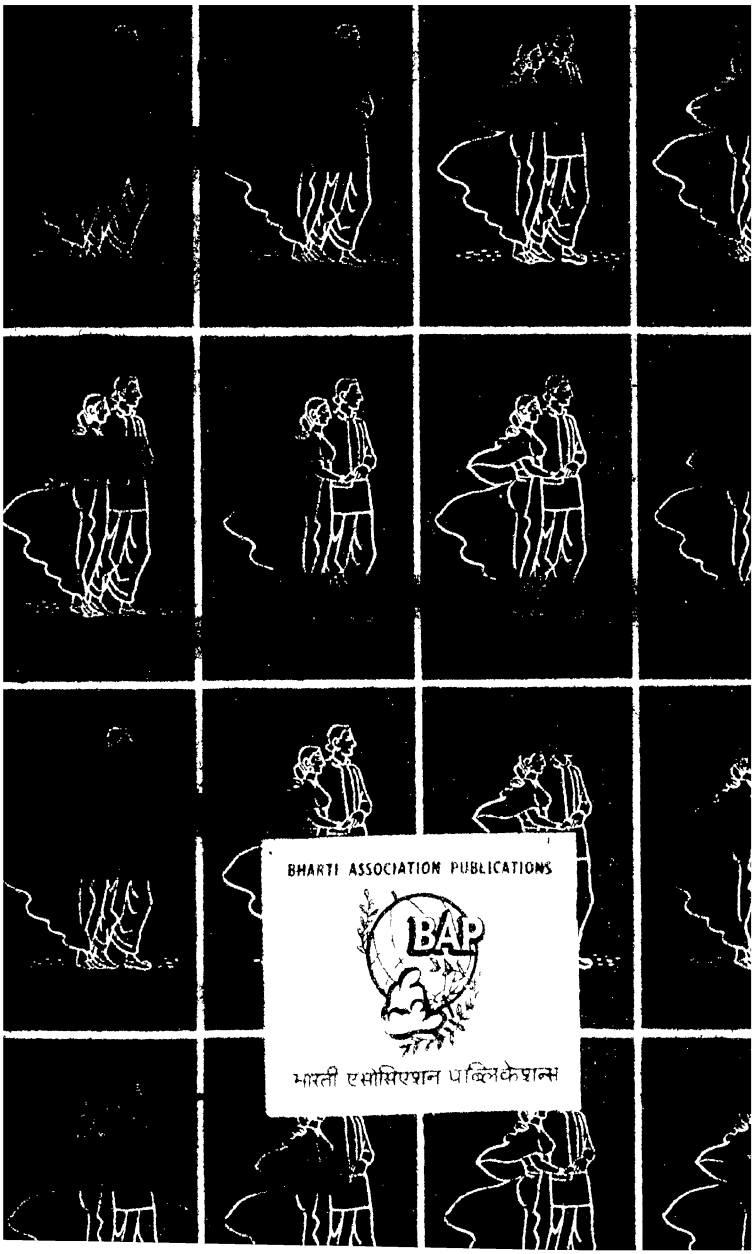

BHARTI ASSOCIATION PUBLICATIONS

BAP

भारती एसोसिएशन पब्लिकेशन्स